22
भारत में कृषि विकास

22.1 भूमिका

आप पिछले पाठों में भारत की जलवायु, मृदा तथा जल संसाधनों के बारे में अध्ययन कर चुके हैं। ये सभी प्राकृतिक पर्यावरण के महत्वपूर्ण अवयव हैं। विद्यमान प्राकृतिक पर्यावरण तथा विभिन्न संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर भारतीय लोग विविध व्यवसायों में लगे हुये हैं। हमारे देशवासियों के लिये कृषि शायद सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। इस पाठ में आप भारत में कृषि के महत्व, भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताओं, विभिन्न प्रकार की कृषि पद्धतियाँ, भारतीय कृषि का आधुनिकीकरण, विविधताएँ, तथा भारत के पशुधन के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

22.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के बाद आप –

- भारत में कृषि के महत्व को समझा सकेंगे;
- भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- भारत में अपनायी जाने वाली विविध कृषि पद्धतियों की व्याख्या कर सकेंगे;
- भारत में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिये अपनाये गये उपायों के बारे में बता सकेंगे;
- स्वतंत्रता के बाद भारतीय कृषि में हुई प्रगति को स्पष्ट कर सकेंगे;
- परम्परागत कृषि पर हरित क्रांति के प्रभाव को स्पष्ट कर सकेंगे;
- भारतीय पशुधन की निम्न गुणवत्ता के कारणों को स्पष्ट कर सकेंगे तथा उसके सुधार के उपाय सुझा सकेंगे।

22.3 भारत में कृषि का महत्व

कृषि फसलों को पैदा करने एवं पशुओं को पालने का व्यवसाय है। यह भारतीय लोगों के महत्वपूर्ण व्यवसायों में से एक है, जिसमें लगभग 65 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या लगी हुई है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है। स्वतंत्रता के बाद से औद्योगीकरण के लिये किये गये अनेकों प्रयत्नों के बावजूद, आज भी देश की जनसंख्या का दो तिहाई भाग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी जीविका के लिये कृषि पर निर्भर करता है। हमारे सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का लगभग एक तिहाई भाग है। भारत के निर्यात की आय में कृषि उत्पादों का भाग लगभग 30 प्रतिशत है। यह न केवल हमें खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराती है, अपितु पशुओं के लिए चारा तथा कृषि पर आधारित उद्योगों के लिये कच्चा माल जैसे कपास, पटसन, गन्ना तथा तिलहन भी पैदा करती है। इस प्रकार, कृषि भारतीय लोगों की जीविका का एक अत्यधिक महत्वपूर्ण साधन है तथा अत्यधिक में रोजगार उपलब्ध कराने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

22.4 भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषतायें

यद्यपि भारत मुख्य रूप से एक कृषि प्रधान देश है, तथापि कृषि अनेक कमियों की शिकार है। देश के कुल श्रम शक्ति के 65 प्रतिशत भाग को रोजगार उपलब्ध कराने वाला यह क्षेत्र राष्ट्रीय आय में 30 प्रतिशत से कम का योगदान देता है। भारतीय कृषि एक परम्परागत पद्धति पर आधारित है। लोग इसे एक व्यवसाय के रूप में उतना नहीं अपनाये हुये है जितना कि एक जीविकोपार्जी साधन के रूप में अपनाये हुये हैं। विश्व के अनेकों विकसित राष्ट्रों की तुलना में देश में कृषि उत्पादकता काफी कम है। भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं –

1. **प्रतिव्यक्ति भूमि की निम्न उपलब्धता :–** भारत में प्रतिव्यक्ति 0.29 हैक्टेयर भूमि उपलब्ध है; जबकि यह संयुक्त राज्य अमेरिका में 0.89 हैक्टेयर, रूस में 0.92 हैक्टेयर अर्जेन्टिना में 1.25 हैक्टेयर, कनाडा में 2.00 हैक्टेयर तथा आस्ट्रलिया में 3.40 हैक्टेयर है। संसार में औसत प्रति व्यक्ति भूमि 0.36 हैक्टेयर है भारत में प्रति व्यक्ति भूमि संसार के औसत से भी कम है। प्रति व्यक्ति भूमि की कम उपलब्धता इस तथ्य की सूचक है कि भारत में इस संसाधन पर जनसंख्या का दबाव अधिक है।

2. **खाद्य फसलों की प्रधानता :–** भारत में छोटे खेतों पर कृषि कार्य मुख्यत: जीवको पार्जी स्तर पर किया जाता है। कुल जोती गयी भूमि के लगभग 67 प्रतिशत भाग पर खाद्य फसलों को उगाया जाता है। अभी तक उद्यान तथा व्यापारिक कृषि का विकास अधिक नहीं हुआ है, जैसा कि चित्र 22.1 से स्पष्ट है।

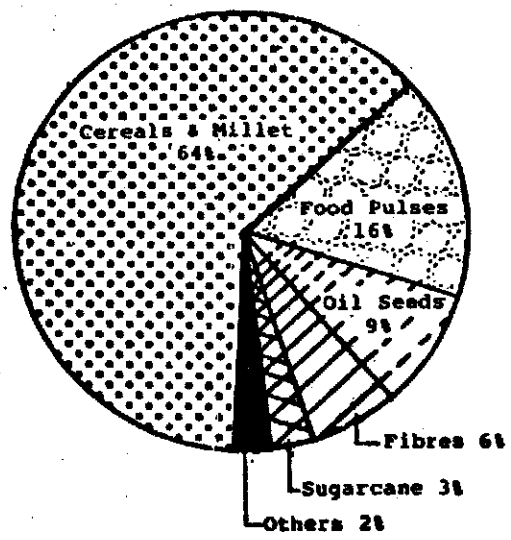

चित्र 22.1 – भारत में फसलों का स्वरूप

3. **प्रकृति पर अत्यधिक निर्भरता :-** भारतीय कृषि मौसम की मनमानी का शिकार होती है। हमारे देश में कृषि की सफलता मानसून के व्यवहार पर निर्भर करती है जो अत्यधिक परिवर्तनशील तथा अनिश्चित है। सिंचाई सुविधायें कुल बोये गये क्षेत्र के लगभग 28 प्रतिशत भाग पर ही उपलब्ध है। स्वतंत्रता के बाद से सिंचाई की सुविधायें अत्यधिक विस्तृत भाग पर उपलब्ध करायी गयी है। फिर भी, यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि आने वाले समय में इसे कुल बोये गये क्षेत्र के 45 से 50 प्रतिशत भाग से अधिक क्षेत्र पर नहीं बढ़ाया जा सकता।

4. **निम्न उत्पादन :-** कुछ विकसित देशों की तुलना में भारत में प्रति हैक्टेयर उत्पादन काफी कम है। वास्तव में यह कुछ विकासशील देशों जैसे चीन की तुलना में भी काफी कम है। इसके लिये बीजों का घटिया होना तथा कृषि की परम्परागत विधियाँ मुख्यरूप से उत्तरदायी है, यद्यपि अधिक उत्पादन देने वाले बीजों तथा रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते उपयोग के कारण इस स्थिति में काफी हद तक सुधार हुआ है। वर्तमान में, देश के कुल जोते गये भू भाग के लगभग 20 प्रतिशत भाग पर उन्नत किस्म के बीज बोये जाते हैं।

5. **कृषि में मशीनीकरण का निम्न स्तर :-** भारत में अधिकांश किसान परम्परागत तरीके से खेती करते हैं। कृषि जोतों का आकार इतना छोटा है कि उनमें बड़ी मशीनों से खेती नहीं की जा सकती। छोटे खेतों के योग्य मशीनों की कमी भी भारत में कृषि के मशीनीकरण के निम्न स्तर के लिये उत्तरदायी है। भारतीय किसान आज भी पुराने

कृषि यंत्रों व विधियों का उपयोग कृषि कार्यों में कर रहे हैं। भारतीय कृषि श्रम प्रधान है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन के कम होने का यह एक मुख्य कारण है। यद्यपि, पिछले कुछ दशकों में, कृषि में मशीनीकरण का स्तर कुछ ऊपर उठा है, लेकिन यह अभी भी काफी निम्न है।

6. **जीविकोपार्जी कृषि पर अधिक जोर :-** भारतीय कृषि अभी भी मुख्यत: जीविकोपार्जी प्रकार की ही है। किसान सामान्यतया उन फसलों को उगाते हैं जिनका उपयोग वे स्वयं करते हैं। परिणामस्वरूप, कृषि में मुनाफा का स्तर सामान्यतया निम्न है।

7. **अनेक प्रकार की फसलें :-** फसलों की बाहुल्यता भारतीय कृषि की एक अन्य विशेषता है। ऐसा आंशिक रूप से कृषि को जीवकोपार्जी प्रकृति तथा आंशिक रूप से देश के विभिन्न भागों में पायी जाने वाली प्राकृतिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के कारण है। इस प्रकार, भारतीय कृषि में विशिष्टता की कमी है। यह अक्सर उन फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहित करती है जिनके लिए प्राकृतिक पर्यावरण उपयुक्त नहीं है। हालांकि, दूसरी ओर मृदा व जलवायु दशाओं ने हमें हर प्रकार की उपयोगी फसलों के पैदा करने के योग्य बनाया है चाहे वे अच्छे या मोटे खाद्यान्न या ज्वार बाजरा हो, दालें, तिलहन, गर्म-मसाले, सब्जियाँ, फल, रेशेदार फसलें पेय पदार्थ हों तथा चाहे औद्योगिक फसलें जैसे गन्ना, रबर, तथा तम्बाकू हों। इस के साथ ही, चरागाहों के अन्तर्गत बहुत छोटे क्षेत्र के बावजूद हम संसार के दुग्ध व दुग्ध उत्पाद के दूसरे सबसे बड़े उत्पादक हैं।

भारतीय कृषि की विशेषतायें

* जनसंख्या का भूमि पर अधिक दबाव
* कृषि में खाद्यान्नों की प्रधानता
* प्रकृति पर अत्यधिक निर्भरता
* प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम
* मशीनीकरण में धीमी प्रगति
* कृषि का श्रम प्रधान होना
* फसलों की बाहुल्यता

22.5 भारत में कृषि के प्रमुख प्रकार

भारत के विशाल आकार के साथ भौगोलिक दशाओं में अधिक विविधता तथा सांस्कृतिक व तकनीकी कारकों के परिणामस्वरूप हमारे देश में अनेक प्रकार की कृषि पद्धतियों का विकास हुआ है। देश के कुछ भागों में वर्षा पर्याप्त होती है तथा कृषि के लिये सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, जबकि कुछ अन्य भागों में सिंचाई करना आवश्यक है। इसी तरह, देश के कुछ भागों में स्थानीय उपभोग के लिए विभिन्न फसलों की खेती की जाती

है, जबकि कुछ अन्य भागों में फसलों को बेचने के लिये उगाया जाता है। सिंचाई सुविधाओं के उपयोग, उत्पादन के उद्देश्य, फसलों की विविधता तथा भूमि उपयोग की क्रियाओं के आधार पर भारत में अनेक प्रकार की कृषि पद्धतियों को पहचाना जा सकता है। भारत में अपनायी गई प्रमुख कृषि पद्धतियों का वर्णन निम्न प्रकार से है।

1. **आर्द्र कृषि :-** यह कृषि पद्धति देश के जलोढ़ मृदा वाले उन भागों में अपनायी जाती है, जहाँ औसत वार्षिक वर्षा 200 से. मी. से अधिक होती है। हिमालय के मध्य व पूर्वी भाग, प. बंगाल, मालावार तट, असम, नागालैण्ड, मेघालय, त्रिपुरा तथा मणीपुर इन प्रदेशों में शामिल हैं, जहाँ एक वर्ष में एक से अधिक फसलें बोयी जाती हैं। चावल, पटसन तथा गन्ना आदि इन प्रदेशों की प्रमुख फसलें हैं, जिन्हें सिंचाई के बिना उगाया जाता है।

2. **शुष्क कृषि :-** यह कृषि पद्धति उन क्षेत्रों में अपनायी गयी है, जहाँ वार्षिक वर्षा सामान्यतया 80 से.मी. से कम होती है। ऐसे प्रदेशों में भी किसान सिंचाई के बगैर फसलों को उगाते हैं। चूँकि वर्षा की मात्रा सीमित होती है, अत: मृदा में नमी वर्ष में एक ही फसल को उगाने के लिए पर्याप्त होती है। किसान ऐसी फसलों को उगाते हैं, जिन्हें कम नमी की आवश्यकता होती है। ज्वार-बाजरा इस कृषि की प्रमुख फसलें हैं। मध्य प्रदेश, गुजरात तथा राजस्थान के विस्तृत भागों में इस प्रकार की कृषि की जाती है।

3. **सिंचित कृषि :-** इस प्रकार की कृषि उन भागों में की जाती हैं जहाँ या तो वर्षा मौसमी है या कुछ फसलों के लिये अपर्याप्त होती है। भारत के सबसे अधिक विस्तृत भागों में इस प्रकार की कृषि की जाती है। इन प्रदेशों में सिंचाई के प्रमुख साधान कुएं, नहरें तथा तालाब हैं। सिंचित कृषि केवल ऐसे भागों में ही की जा सकती है, जहां जल की पर्याप्त मात्रा नदियों, तालाबों और भौम जल के रूप में मौजूद हो तथा भूमि समतल हो। भारत में इस प्रकार के प्रदेश पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, उत्तरी-पश्चिमी तमिलनाडु तथा प्रायद्वीपीय नदियों के डेल्टाओं में स्थित हैं। इन प्रदेशों में सिंचाई की मदद से गेहूँ, चावल तथा गन्ना आदि उगाया जाता है। प्रायद्वीपीय पठार के महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा आन्ध्र प्रदेश राज्यों में कुछ महत्वपूर्ण सीमित क्षेत्रों में सिंचित कृषि द्वारा मुख्य रूप से गन्ने की खेती की जाती है। इस कृषि के अन्तर्गत कुछ प्रदेशों में एक तथा अन्य प्रदेशों में वर्ष में दो फसलें पैदा की जाती हैं।

4. **जीवन निर्वाह कृषि :-** इस प्रकार की कृषि स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए की जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य किसी दिये गये क्षेत्र के अधिक से अधिक लोगों के जीवन निर्वाह से होता है। स्थानान्तरी कृषि, स्थायी कृषि तथा गहन कृषि जीवन निर्वाह कृषि के प्रकार हैं। इस कृषि में जोतों का आकार छोटा होता है, मानवीय श्रम तथा साधारण कृषि यंत्रों का अधिक उपयोग होता है।

मिट्टी की उर्वरता बनाये रखने के किये सभी प्रकार की खादों का उपयोग किया जाता है। जीवन निर्वाह कृषि मध्य प्रदेश, पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा दक्षिण बिहार के कुछ भागों, साथ ही देश के अधिकांश पर्वतीय प्रदेशों में की जाती है।

5. **वाणिज्यिक कृषि** :- भारत में यद्यपि अधिकांश कृषि जीवन निर्वाह प्रकार की है, जिसमें उत्पादन का बहुत बड़ा भाग स्थानीय उपयोग के लिये ही पर्याप्त होता है, लेकिन कुछ प्रदेशों में वाणिज्यिक कृषि भी की जाती है। इस कृषि के अन्तर्गत किसान फसलों को मुख्य रूप से बाजार में बेचने के लिये पैदा करते हैं। कृषि के इस प्रकार में फसलों का उत्पादन सामान्यत: उद्योगों के कच्चे माल के रूप में किया जाता है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र तथा अन्य राज्यों में गन्ने की कृषि, महाराष्ट्र, गुजरात तथा पंजाब में कपास की कृषि तथा पं. बंगाल व समीपवर्ती राज्यों में पटसन की कृषि इस प्रकार की कृषि के उदाहरण हैं। देश के कुछ प्रदेशों में जहां जोतों का आकार बड़ा है, जीवन-निर्वाह कृषि के अन्तर्गत भी वाणिज्यिक स्तर पर फसलों को उगाया जाता है। पंजाब व हरियाणा में चावल व गेहूँ एवं तराई क्षेत्र में सब्जियाँ एवं अन्य फसलें इस प्रकार के उदाहरण हैं।

6. **रोपण कृषि** :- बड़े पैमाने पर एक ही फसल की खेती जिसका संगठन औद्योगिक स्तर का हो, रोपण कृषि कहलाती है। इस प्रकार की खेती बड़े आकार की जोतों पर की जाती है। इसके लिये पर्याप्त पूंजी की आवश्यकता होती है। फसलों के उत्पादन तथा विपणन में आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक का उपयोग किया जाता है। भारत में चाय के बागान या एस्टेट रोपण कृषि के आदर्श उदाहरण हैं। इनमें जोतों का आकार बड़ा है, प्रबंधन केन्द्रीय है तथा कृषि अत्यधिक वैज्ञानिक व वाणिज्यिक स्तर पर की जाती है। दूसरी ओर कहवा, रबर तथा नारियल की रोपण कृषि छोटी जोतों पर छोटे या मध्यम वर्गीय किसानों के स्वामित्व में की जाती है।

7. **स्थानान्तरी कृषि** :- इस प्रकार की कृषि पद्धति में फसलों को उगाने के लिये वन भूमाग को साफ किया जाता है। कुछ वर्षों तक ही यहाँ फसलों को उगाया जाता है। मिट्टी की उर्वरता कम होने तथा खर पतवार के उग आने के साथ ही इस भू भाग को छोड़ दिया जाता है तथा नये साफ भूभाग की ओर किसान चले जाते हैं। भारत में इस प्रकार की कृषि मेघालय, मणीपुर, त्रिपुरा, नागालैण्ड तथा मिजोरम में की जाती है। कम घने आबाद क्षेत्रों में इस प्रकार की कृषि मुख्य रूप से स्थानीय जन जातियों के लोगों द्वारा की जाती है। इसे स्थानीय भाषा में 'झूम' कृषि कहते हैं।

8. **सीढ़ीदार कृषि** :- इस प्रकार की कृषि हिमालय तथा प्रायद्वीपीय प्रदेश की पहाड़ियों के ढालों पर की जाती है। इन प्रदेशों में लोग फसलों को उगाने के लिये मृदा व जल संरक्षण के लिये पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीदार खेत बनाते हैं। इसके लिये उन्हें कठोर श्रम करना पड़ता है। सीढ़ीदार कृषि भारत के उ.पू. राज्यों के उन किसानों द्वारा की जाती

है जो स्थानान्तरी कृषि में लगे हुये हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि जनसंख्या वृद्धि का भूमि पर दबाव लगातार बढ़ रहा है। इसके परिणामस्वरूप इन राज्यों में स्थानान्तरी कृषि का क्षेत्र भी क्रमशः कम हो रहा है।

9. **गहन तथा विस्तृत कृषि** – कृषि की वह विधि, जिसमें छोटे-छोटे भू-भागों पर अधिकतम मानव श्रम द्वारा अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जाय, गहन कृषि कहलाती है। इस प्रकार की कृषि घनी जनसंख्या वाले भूभागों में की जाती है। जनसंख्या का भूमि पर दबाव अधिक होता है। इस प्रकार की कृषि श्रम प्रधान होती है तथा अधिक उत्पादन लेने के लिये खेतों में खादों का उपयोग किया जाता है। गंगा के पूर्वी मैदानी भाग में इस प्रकार की कृषि की जाती है। इसके विपरीत, जब बड़ी-बड़ी जोतों पर मशीनों की सहायता व कम मानव श्रम द्वारा खेती की जाती है तो उसे विस्तृत कृषि कहते हैं। इस प्रकार की कृषि उन क्षेत्रों में की जाती है जहाँ जनसंख्या का घनत्व कम होता है। इस कृषि पद्धति में मानव श्रम की कमी के कारण मशीनों का विस्तृत उपयोग किया जाता है। इसे पूंजी प्रधान कृषि भी कहते हैं। इस विधि द्वारा खेती करने में यह प्रयत्न किया जाता है कि विस्तृत भूभाग को कृषि के अन्तर्गत लाकर उत्पादन बढ़ाया जाय। यद्यपि भारत में इस प्रकार की कृषि का कोई आदर्श क्षेत्र नहीं है लेकिन सीमित वर्षा वाले भागों जैसे राजस्थान तथा मध्य प्रदेश व गुजरात के कुछ क्षेत्रों में की जाने वाली कृषि विस्तृत कृषि से मिलती-जुलती है। हिमालय के कम घने आबाद तराई प्रदेश में भी जोतों का आकार बड़ा है। अतः यहाँ भी विस्तृत कृषि जैसी ही कृषि पद्धति अपनायी गयी है।

* वर्षा के वितरण, जोतों के आकार, तकनीकी विकास की असमानता तथा अन्य कारकों के परिणामस्वरूप विभिन्न कृषि पद्धतियों का विकास हुआ है। भारतीय किसानों द्वारा अपनायी गयी कुछ प्रमुख कृषि पद्धतियों में आर्द्र कृषि, शुष्क कृषि, सिंचित कृषि, जीवन निर्वाह कृषि, वाणिज्यिक कृषि, सीढ़ीदार कृषि, गहन तथा विस्तृत कृषि शामिल हैं।

पाठगत प्रश्न 22.2

1. भारत में अपनायी गयी विभिन्न कृषि पद्धतियों को उपयुक्त विशेषताओं एवं उनके प्रमुख क्षेत्रों को चुनकर नीचे दी गयी तालिका को पूर्ण कीजिये :-

कृषि के प्रकार	प्रमुख विशेषतायें	मुख्य क्षेत्र
(क) जीवन निर्वाह कृषि	_____	_____
(ख) रोपण कृषि	_____	_____

(ग) आर्द्र कृषि _____ _____

(घ) वाणिज्यिक कृषि _____ _____

(ण) शुष्क कृषि _____ _____

(विशेषतायें : बाजार के लिये अधिक्र उत्पादन, फैक्ट्री स्तर का प्रबंधन, कम वर्षा वाले भागों में अपनायी गयी कृषि, अधिकांश उत्पादन का स्थानीय उपभोग, अधिक वर्षा वाले भागों में की जाने वाली कृषि।

क्षेत्र - तराई प्रदेश, पं. बंगाल में चावल की कृषि, असम में चाय की कृषि मालावार तट, राजस्थान तथा गुजरात)

2. (क) शुष्क कृषि, (ख) जीवन निर्वाह कृषि (ग) विस्तृत कृषि के विपरीत कृषि के प्रकार बताइए।

22.6 फसल-ऋतुयें तथा फसल-पद्धतियाँ

प्राकृतिक पर्यावरण में विभिन्नता के कारण तथा भूमि पर जनसंख्या के बदलते दबाव से देश के विभिन्न भागों में विभिन्न कृषि पद्धतियों को अपनाया गया है। यदि अन्य दशायें अनुकूल हों तो लम्बे वर्धनकाल में सारे वर्ष अनेक प्रकार की फसलें पैदा की जा सकती हैं। इसीलिये भारतीय कृषि अनेक फसल-ऋतुओं व फसल-पद्धतियों के रूप में जानी जाती है।

(क) भारत की प्रमुख फसल ऋतुयें - भारत में मुख्यत: तीन फसल ऋतुयें होती है (i) खरीफ ऋतु (ii) रबी ऋतु तथा (iii) जायद ऋतु। खरीफ ऋतु वर्षा ऋतु से संबंधित है। इस ऋतु में उगायी जाने वाली फसलों को वर्षा के आगमन से पहले बोया जाता है, और शीत ऋतु के पहले ही काट लिया जाता है। खरीफ ऋतु की प्रमुख फसलें चावल, कपास, मक्का, पटसन, विभिन्न प्रकार की दालें एवं गन्ना हैं जो मुख्य रूप से उत्तरी भारत में उगायी जाती हैं। रबी की फसलों को शीत ऋतु के आरम्भ में बोया जाता है तथा ग्रीष्म ऋतु के पहले ही काट लिया जाता है। गेहूँ, जौ, चना, मटर तथा आलू आदि रबी की फसलें हैं। रबी फसलों के काटने तथा खरीफ फसलों के बोने के बीच के समय को जायद ऋतु कहते हैं। कम समय में तैयार होने वाली अनेक प्रकार की सब्जियां, तरबूज, खरबूजा आदि इस ऋतु में उगाये जाते हैं। प. बंगाल में बोरो चावल तथा महाराष्ट्र में मूंग भी जायद ऋतु की फसलें हैं।

(ख) शस्यावर्तन - मृदा की उर्वरता बनाये रखने के लिये उसमें खादों व रायायनिक खादों के प्रयोग व भूमि को कुछ समय के लिये परती छोड़ने के अलावा अन्य अनेक

विधियों का भी प्रयोग किया जाता है। शस्यावर्तन भी मृदा की उर्वरता बनाये रखने की एक विधि है। इसके अन्तर्गत, किसी खेत में अनेक फसलों को एक के बाद एक क्रम में इस प्रकार बोया जाता है कि विभिन्न फसलें मृदा से भिन्न मात्रा में विभिन्न गहराइयों से पोषक तत्वों को ग्रहण करें, साथ ही बोयी गयी फसलों में से कुछ फसलें पूर्व में बोयी गयी फसल द्वारा ग्रहण किये गये पोषकों की अपनी जड़ों द्वारा आपूर्ति भी करती रहें। प्रत्येक फसल मृदा से निश्चित खनिजों तथा जैव पदार्थों का अपने विकास के लिये उपयोग करती है। किसी एक फसल को हर साल एक ही खेत में उगाया जाये तो उस फसल द्वारा ग्रहण किये गये खनिजों व जैव तत्वों की उस खेत की मृदा में कमी हो जायेगी, लेकिन यदि भिन्न-भिन्न फसलों को एक निश्चित क्रम में बोया जाये तो इससे पूर्व फसलों द्वारा ग्रहण किये गये खनिज़ों व जैव पोषकों की मृदा में आपूर्ति हो जायेगी तथा रासायनिक खादों के उपयोग की आवश्यकता भी कम होगी। शस्यावर्तन में दाल वाली फसले जैसे मटर व अन्य दालें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये फसलें मृदा में नाइट्रोजन तत्व की वृद्धि करती हैं। इन फसलों को अन्य फसलों जैसे कपास तथा खाद्यान्न फसलों को उगाने के बाद बोया जाता है क्योंकि ये फसले मृदा से नाइट्रोजन ग्रहण करती हैं। किसी प्रदेश में शस्यावर्तन के लिये फसलों का चुनाव उस प्रदेश की मिट्टियों तथा कृषि पद्धतियों पर निर्भर करता है।

> * मृदा की उर्वरता बनाये रखने के लिए किसी एक खेत में अनेक फसलों को एक के बाद एक क्रम में उगाने को शस्यावर्तन कहते हैं।

(ग) बहु-शस्यन तथा मिश्रित शस्यन - वर्ष में उसी भूमि पर दो या दो से अधिक फसलों के उगाने को बहु शस्यन कहते हैं। यह उन क्षेत्रों में की जाती है, जहाँ की मिट्टी में वर्ष भर पर्याप्त नमी रहती है या जहाँ शुष्क ऋतु में विभिन्न फसलों की जल की आवश्यकता को पूरा करने के लिये सिंचाई सुविधायें उपलब्ध होती है। गंगा के मैदानों, डेल्टाई प्रदेशों तथा प्रायद्वीपीय पठार के उन सीमित सिंचित क्षेत्रों में इस प्रकार की कृषि की जाती है।

जब किसी भूभाग पर एक साथ एक से अधिक फसलों को उगाया जाता है तो उसे मिश्रित शस्यन कहते हैं। इसके अंतर्गत फसलों को इस प्रकार मिश्रित करके बोया जाता है कि एक फसल मिट्टी में उन पोषकों की पूर्ति करती है, जिन्हें दूसरी फसल द्वारा उपयोग किया गया है। विभिन्न फसलों के वर्धनकाल में अन्तर होता है। फलस्वरूप, कई फसलों को एक साथ बोया जाता है, लेकिन उन्हें भिन्न समयों में काटा जाता है। उदाहरण के लिये, शीघ्र पकने वाली फसलों जैसे ज्वार-बाजरा, मक्का तथा कुछ दालों को देर से पकने वाली फसलों जैसे कपास, और गन्ने के साथ बोया जाता है। जब तक किसान एक फसल काट लेता है, तब तक दूसरी फसल कटने के लिय तैयार हो जाती है। इस पद्धति में

किसानों को पूर्णतः आर्थिक हानि का जोखिम कम से कम होता है, क्योंकि यदि एक फसल से भूरपूर उत्पादन नहीं मिलता तो दूसरी फसल उस फसल की कमी को पूरा कर देती है। इस प्रकार इस पद्धति से मौसमी दशाओं की अनिश्चितता तथा उत्पादों की कीमतों के उतार चढ़ाव से किसानों की रक्षा होती है।

* एक वर्ष में उसी भूभाग पर एक से अधिक फसलों का उगाना बहु शस्यन कहलाता है।
* एक साथ एक भूभाग पर एक से अधिक फसलों को उगाने को मिश्रित शस्यन कहते हैं।

22.7 फसलों का तालमेल

भारत के अधिकांश भागों में भूमि के बड़े भाग पर कृषि की जाती है। देश के कुछ भागों में पूरे क्षेत्र पर केवल एक ही फसल पैदा की जाती है। लेकिन सामान्यतया एक प्रदेश में किसान एक से अधिक फसलें पैदा करते हैं। इन फसलों का चुनाव उस प्रदेश में विद्यमान प्राकृतिक, आर्थिक तथा सामाजिक दशाओं के आधार पर किया जाता है। कुछ फसलों को विस्तृत क्षेत्रों में जबकि कुछ को केवल सीमित क्षेत्रों में ही उगाया जाता है। किसी प्रदेश में एक वर्ष में उगायी जाने वाली अनेक फसलों को उस प्रदेश का फसलों का तालमेल कहते हैं। फसलों के इस प्रकार के आधार पर पहचाने गये कृषि-प्रदेशों को फसलों के तालमेल वाले प्रदेश कहते हैं। चूंकि अधिकांश क्षेत्रों में फसलों को अकेला न बोकर उन्हें अन्य फसलों के साथ बोया जाता है, किसी खास फसल के साथ किसी प्रदेश की पहचान करना सही नहीं होगा। उदाहरण के लिये भारत का चावल तथा गेहूँ के आधार पर प्रदेशों में विभाजन ठीक नहीं है, क्योंकि इससे भारतीय कृषि की मुख्य विशेषता जैसे देश के अधिकांश भागों में अनेक प्रकार की फसलों को उगाया जाना उजागर न होकर छिप जाती है। यद्यपि गेहूँ पंजाब की प्रधान फसल है, लेकिन चावल, दालें तथा गन्ना भी यहां खूब उगाया जाता है।

इसी प्रकार चावल की प्रधानता वाले क्षेत्रों में गेहूं, तिलहन तथा दालों आदि को भी उगाया जाता है। किसी प्रदेश में कृषि के विस्तृत अध्ययन के लिये आजकल उस प्रदेश में उगायी जाने वाली फसलों के आधार पर कृषि मानचित्र बनाये जाते हैं। कृषि वैज्ञानिकों ने फसलों के तालमेल प्रदेशों की पहचान के लिये अनेक विधियों का विकास किया है। इन विधियों की मदद से फसलों के तालमेल प्रदेशों का अध्ययन सरल हो गया है। इनमें से सबसे सरल विधि के अनुसार किसी प्रदेश में उसमें कुल क्षेत्रफल के सबसे अधिक भाग पर बोयी गयी प्रत्येक फसल को चुना जाता है फिर उन्हें प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय आदि फसल का दर्जा दिया जाता है। इन प्रधान फसलों के आधार पर फसलों के तालमेल प्रदेशों

की पहचान व सीमांकन किया जा सकता है। इनमें से प्रत्येक प्रदेश की पहचान प्रधान फसल के नाम से की जाती है। ऐसे प्रदेशों को द्वितीय व तृतीय क्रम की फसलों के आधार पर पुन: विभाजित किया जाता है।

* किसी प्रदेश में वर्ष में बोयी जाने वाली विभिन्न फसलों के तालमेल को फसलों का तालमेल कहते हैं।
* बोई गयी प्रमुख फसलों के आधार पर विभिन्न प्रदेशों की पहचान की जाती है जिन्हें फसलों के तालमेल प्रदेश कहते हैं।

22.8 फसलों की गहनता

फसलों की गहनता की माप एक वर्ष में एक कृषि भूमि पर उगाई जाने वाली फसलों की संख्या के संदर्भ में की जाती है। यदि एक वर्ष में केवल एक ही फसल बोई जाती है तो फसलों की गहनता कम होगी तथा यदि दो या दो से अधिक फसलें एक वर्ष में बोई जाती है तो फसलों की गहनता अधिक होगी। कम या निम्न फसलों की गहनता उस प्रदेश में भूमि उपयोग के निम्नस्तरीय उपयोग को दर्शाती है। इस प्रकार फसलों की गहनता फसलों के लिये भूमि के उपयोग के स्तर को बताती हे। किसी क्षेत्र में फसलों की गहनता जोतों के आकार या प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता, प्राकृतिक पर्यावरण, सामाजिक रीतिरिवाज, सिंचाई के साधान तथा उस क्षेत्र में अपनायी गयी कृषि विधियों पर निर्भर करती है। भारत के विस्तृत भाग में वर्षा कम होती है तथा सिंचाई के सीमित साधन हैं। कुछ अन्य भाग हर वर्ष कुछ महीनों तक बाढ़ के पानी में डूबे रहते हैं। ऐसे प्रदेशों में एक वर्ष में एक से अधिक फसल नहीं उगायी जा सकती। इसीलिए ऐसे प्रदेशों में फसलों की गहनता कम होती है। अधिक घनी जनसंख्या के क्षेत्रो में उपजाऊ मिट्टियों तथा सिंचाई सुविधाओं में सम्पन्न प्रदेशों अथवा अधिक वर्षा पाने वाले प्रदेशों में सामान्यतया फसलों की गहनता अधिक होती है।

हमारे देश में फसलों की गहनता एक भाग से दूसरे भाग में भिन्न पायी जाती है। यह मुख्य रूप से मिट्टी की उर्वरता, वर्षा की मात्रा तथा जनसंख्या घनत्व की भिन्नता का परिणाम होती है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों, जहां की मिट्टियां उपजाऊ हैं तथा जहां जनसंख्या का घनत्व अधिक है जैसे प. बंगाल तथा तटीय मैदानों में फसलों की गहनता अधिक है। दूसरी ओर, शुष्क प्रदेशों जैसे राजस्थान, गुजरात के भागों तथा कम उपजाऊ मिट्टियों वाले म.प्र. के भागों में फसलों की गहनता कम है पंजाब, हरियाणा, कर्नाटक तथा तमिलनाडु के अधिकांश भागों में फसलों की गहनता मध्यम स्तरीय है।

1950 से सिंचाई सुविधाओं के विस्तार तथा शुष्क ऋतुओं की फसलों की प्रस्तावना से फसलों की गहनता में क्रमिक वृद्धि हुई है। एक वर्ष में एक से अधिक बार बोये गये

क्षेत्र के बढ़ जाने से प्रति हैक्टेयर उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। उत्तरी मैदानों, प. असम तथा त्रिपुरा के मैदानी प्रदेशों में वर्षा की पर्याप्त मात्रा, मिट्टियों के उपजाऊपन तथा सिंचाई सुविधाओं के विकास से फसलों की गहनता अधिक है। दूसरी ओर देश के पर्वतीय तथा शुष्क भागों में यह कम है।

> * फसलों की गहनता से तात्पर्य एक वर्ष में किसी भूभाग पर उगाई गयी फसलों की संख्या से है। जहां वर्ष में अधिक फसलें उगायी जाती हैं वहां फसलों की गहनता अधिक होती है।

22.9 कृषि उत्पादन की वृद्धि के लिये किये गये उपाय

भारत में विभिन्न फसलों का प्रति हैक्टेयर उत्पादन कई देशों की तुलना में कम है। यह कृषि की परम्परागत विधियों, निम्न पूंजी विनियोग, भूमि सुधार योजनाओं का अभाव तथा किसानों में शिक्षा की कमी का परिणाम है। जनसंख्या की क्रमशः वृद्धि तथा कृषि उत्पादन की बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुये यह आवश्यक है कि कृषि-उत्पादन बढ़ाया जाय। कृषि के लिये उपलब्ध क्षेत्र सीमित है अतः यह प्रति हैक्टेयर उत्पादन अथवा फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर ही किया जा सकता है। कृषि देश की श्रम शक्ति के एक बड़े भाग को रोजगार उपलब्ध कराती है तथा राष्ट्रीय आय में महत्वपूर्ण योगदान करती है, अतः हमारी अर्थव्यवस्था के इस क्षेत्र का विकास भारत के कुल आर्थिक विकास के लिए अति आवश्यक है। भारतीय कृषि में उत्पादकता के उच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये निम्न उपाय किये गये हैं।

(i) अच्छी किस्म के बीजों, खादों तथा सिंचाई सुविधाओं का उपयोग – भारतीय किसान परम्परागत रूप से घटिया किस्म के बीजों का उपयोग करता रहा है तथा वर्षा पर पूरी तरह से निर्भर रहा है। कृषि की उत्पादकता बढ़ाने के लिये देश के किसानों को अधिक उपज देने वाले अनेक प्रकार के बीज, रासायनिक खादों तथा सिंचाई की सुविधाओं को उपलब्ध कराया जा रहा है। देश में विस्तृत कृषि के लिये पर्याप्त क्षेत्र नहीं है, इसलिये गहन कृषि की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। इस तथ्य को ध्यान में रख कर सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया गया है तथा आज भी देश के कृषि नियोजन में सिंचाई को उच्च प्राथमिकता प्राप्त है। दीर्घकालीन नियोजन तथा बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं द्वारा बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में बाढ़ों की रोकथाम की जा रही है।

(ii) कृषि का यंत्रीकरण – कृषि के आधुनिकीकरण के लिये यंत्रीकरण भी आवश्यक है। विकसित यंत्रों तथा मशीनों जैसे लोहे के हल, ट्रैक्टर, ट्राली, फसल काटने तथा गहाई करने वाली मशीनों, नल कूपों, छिड़काव करने के उपकरणों के उपयोग से मानव श्रम, पशु शक्ति तथा सबसे अधिक समय की बचत हुई है। इससे कृषि क्षेत्र में डीजल तथा

विद्युत का उपभोग बढ़ा है। भारतीय किसान सामान्यतया गरीब है। उन्हें आधुनिक मशीनें सहकारी समितियों तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा किस्तों में उपलब्ध कराया जा रहा है।

(iii) कीट तथा फफूंदी नियंत्रण – कीड़ों तथा फफूंदी द्वारा हुये फसलों के नुकसान से कृषि में प्रति हैक्टेयर उत्पादन कम हो जाता है। इस हानि से बचने के लिये कीटनाशी तथा फफूंदी नाशी दवाओं के उपयोग के लिये किसानों को प्रोत्साहित किया गया है। अनेक प्रकार के रासायनिक कीटनाशी दवाओं के अतिरिक्त अब किसानों को जैवीय फफूंदी नियंत्रण विधियों को अपनाने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत कीड़ों व फफूंदी पैदा करने वाले जीवों की जनसंख्या को अन्य प्रकार के कीड़ों द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है। ये कीड़े फसल को हानि करने के स्थान पर उन कीड़ों व फफूंदी वाले जीवों का उपभोग करके फसल की रक्षा करते हैं। इस प्रकार बिना रासायनिक कीटनाशी दवाओं के उपयोग किये फसलों की सुरक्षा की जा सकती है।

(iv) किसानों को शिक्षित करना – अधिकांश भारतीय किसान अशिक्षित रहे हैं तथा उन्हें कृषि की वैज्ञानिक विधियों की जानकारी नहीं है। किसानों को शिक्षित करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये जिससे उन्हें कृषि में हुये नये विकासों की जानकारी दी जा सके, प्रदर्शन फार्म तथा कृषि विस्तार केन्द्रों की देश के अनेक भागों में स्थापना की गयी है। राजस्थान के गंगा नगर जिले में स्थापित सूरतगढ़ स्टेट फार्म एक महत्वपूर्ण प्रदर्शन केन्द्र है। इन कृषि फार्मों से कृषि की मशीनों, अच्छी किस्म के बीजों तथा कृषि की आधुनिक तकनीक के उपयोग को बढ़ावा दिया जा रहा है। इनके अतिरिक्त, भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र नई दिल्ली तथा अन्य संस्थानों द्वारा उन्नत किस्म के बीजों का उत्पादन हो रहा है तथा देश के सभी भागों के किसानों को उपलब्ध कराया जा रहा है। इन बीजों के उपयोग से कृषि के उत्पादन को बढ़ाने में मदद मिली है। इन उन्नत किस्म के बीजों के उपयोग से पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में गेहूँ के उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुयी है। इससे देश में हरित क्रांति लाने में सहायता मिली है। इसके अलावा खासकर किसानों के लिये प्रसारित रेडियो तथा दूरदर्शन के कार्यक्रमों द्वारा भी कृषि के विकास में बहुत मदद मिली है।

(v) चकबन्दी – छोटी तथा विखरी जोतें निम्न कृषि उत्पादकता का एक कारण है। ये भूमि के वैज्ञानिक तरीके से जोतने-बोने तथा सुधरे नवीन यंत्रों और मशीनों बीजों, रासायनिक खादों आदि के उपयोग में बाधक रहे हैं। छोटी और विखरी जोतों की समस्या को चकबन्दी द्वारा दूर किया जा रहा है।

(vi) विपणन व्यवस्था में सुधार – प्रत्येक कृषि ऋतु से पूर्व सरकार अनेक फसलों के मूल्य तय करती है, ताकि किसानों को उनकी उचित कीमत मिल सके। साथ ही विपणन की समस्याओं को सहकारी समितियों तथा नियमित बाजारों की स्थापना द्वारा

सुलझाया गया है। अनेक फसलों की निम्नतम कीमत निश्चित करके किसानों को अपनी फसलों की अच्छी कीमत प्राप्त होती है तथा कटाई के मौसम में कीमतों के अधिक गिर जाने से उन्हें कोई हानि नहीं उठानी पड़ती।

(vii) गहन कृषि तथा शस्यावर्तन – ऊपर वर्णित उपायों के अतिरिक्त गहन कृषि, शुष्क कृषि तथा शस्यावर्तन अपनाकर देश में कृषि उत्पादन बढ़ाने के उपाय किये जा रहे हैं।

(viii) जमींदारी प्रथा का उन्मूलन तथा जोतों की सीमाबन्दी – स्वतंत्रता से पहले जमीदार अपनी जमीन को किसानों को लगान पर देते थे तथा फसल का अधिकांश भाग राजस्व या लगान के रूप में वसूल करते थे। इससे किसानों की आर्थिक स्थिति हमेशा खराब रहती थी, जबकि जमींदार विलासता का जीवन व्यतीत करते थे। आर्थिक साधनों की कमी तथा जमीन का मालिकाना हक न होने के कारण किसान कृषि भूमि के विकास या सुधार का कोई प्रयत्न नहीं कर पाते थे। स्वतंत्रता के बाद सरकार ने इस प्रथा को समाप्त कर दिया तथा जो जमींन जोतते थे, उसका स्वामित्व उन्हें दे दिया गया।

भारत में जोतों का आकार एक समान नहीं है। ऐसा अनुभव किया गया कि बहुत बड़ी जोतों का उपयोग ठीक प्रकार से नहीं होता, जबकि बहुत से किसानों के पास जोतने के लिये जमीन नहीं होती। इसलिये सरकार ने कानून बनाकर कृषि भूमि की जोतों की सीमा निर्धारित कर दी। इस कानून के अनुसार कोई किसान सरकार द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक जमीन का स्वामी नहीं हो सकता। इस प्रकार प्राप्त की गयी अतिरिक्त या जोत सीमा से अधिक जमीन को भूमिहीन किसानों को बांट दी गयी।

(ix) अन्य योजनायें – ऊपर वर्णित योजनाओं के अतिरिक्त सरकार ने ग्रामीण विद्युतीकरण को तीव्रता से प्रारम्भ किया है। इससे किसानों को सिंचाई के लिये नलकूप लगाने की सुविधायें उपलब्ध होगी। अधिकांश गावों को पक्की सड़कों द्वारा नगरों से जोड़ा गया है। इससे किसानों को अपने उत्पादों को बाजारों में ले जाने में सहायता मिली है। फसल बीमा योजना भी प्रारम्भ की गयी है। अन्य अनेक योजनायें जिनसे कीड़ों, फफूंदी व टिड्डियों से फसलों को होने वाले नुकसानों से किसान को सुरक्षा मिली है, को लागू किया गया है। किसानों के लाभ के लिये विशेष कृषि कार्यक्रमों को रेडियों तथा दूरदर्शन पर प्रसारित किया गया है। अनेकों कृषि मेलों को देश के कृषि विश्वविद्यालयों व जिला मुख्यालयों में लगाया गया है, इससे किसानों को कृषि क्षेत्र के अनेक नवीनतम विकासों की जानकारी प्राप्त कराई गयी है। अनेक पत्रिकाओं द्वारा जो कृषि विश्वविद्यालयों व कृषि मंत्रालय द्वारा प्रकाशित की जा रही हैं, नवीनतम जानकारी दी जा रही है। इन योजनओं व कार्यक्रमों द्वारा भारतीय किसान अपनी जमीन की उत्पादकता बढ़ाकर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने में समर्थ होगा। रेडियो तथा दूरदर्शन द्वारा मौसमी दशाओं व मौसम संबंधी भविष्यवाणी प्रत्येक सुबह व शाम के प्रसारणों में देश के किसानों के लाभ के लिये की जा रही है।

* उत्तम किस्म के बीज, खादों के उपयोग में वृद्धि तथा सिंचाई सुविधाओं में विस्तार
* कृषि में यंत्रीकरण तथा कीड़ों व फफूंदी नियंत्रण
* कृषि में आधुनिक मशीनों का उपयोग
* विपणन व यातायात तंत्र में सुधार तथा न्यूनतम समर्थन मूल्यों को निश्चित करना
* बाढ़ नियंत्रण, गहन कृषि तथा शस्यावर्तन
* चकबन्दी
* किसानों की शिक्षा, अन्वेषण संस्थानों व प्रदर्शन फार्मों की स्थापना
* जमींदारी प्रथा का उन्मूलन तथा जोत सीमा बन्दी

22.10 हरित क्रांति

स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय कृषि आत्मनिर्भर होने के वावजूद केवल कृषि की परम्परागत विधियों पर ही निर्भर थी। अविभाजित भारत का विभाजन भारतीय कृषि के लिये एक गहरी चोट सावित हुआ, क्योंकि संसार के सबसे उत्तम चावल व जूट पैदा करने वाले भाग पूर्वी पाकिस्तान अब बांग्लादेश में चले गये। इसी प्रकार, संसार के सर्वोत्तम सिंचाई वाले भाग जहाँ गेहूँ व कपास अधिक पैदा होती है, पश्चिमी पाकिस्तान में चले गये। इस प्रकार भारत में यकायक मुख्य खाद्य फसलों व रेशेदार फसलों की कमी आ गई। स्वतंत्र भारत की विकास योजनाओं के परिणामस्वरूप मृत्युदर में हुई तीव्र गिरावट के कारण जनसंख्या तेजी से बढ़ी। विदेशी शासन के दौरान उपेक्षित रही कृषि को अत्यधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। लगभग दो दशकों तक देश को खाद्य पदार्थों के आयात पर अत्यधिक निर्भर रहना पड़ा। समय-समय पर होने वाली मानसूनी वर्षा की असफलता खासकर 1967 ने स्थिति को और भी अधिक गम्भीर बना दिया। हालांकि, यह विपरीत स्थिति भारतीय किसानों के कठोर परिश्रम तथा कृषि वैज्ञानिकों व अभियंताओं की मदद से एक अच्छे अवसर के रूप में बदल गयी। शीघ्र ही भारत खाद्य पदार्थों में लगभग आत्मनिर्भर हो गया। भारतीय किसानों के कठिन परिश्रम से प्राप्त इस उपलब्धि को हरित क्रांति के रूप में जाना जाता है।

हरित क्रांति कुल कृषि उत्पादन के लिये उतनी नहीं जानी जाती है, जितनी वह प्रति हैक्टेयर उत्पादन में हुयी महत्वपूर्ण वृद्धि के लिये जानी जाती है। इसको तीन प्रकार से संभव बनाया गया (i) अधिक उत्पादन देने वाले व कम समय में तैयार होने वाले बीजों

(ii) रासायनिक खादों के उपयोग तथा (iii) पर्याप्त सिंचाई सुविधाओं के सुनिश्चित विस्तार। हरित क्रांति की प्रमुख विशेषताएं निम्न हैं –

1. **अधिक उपज देने वाले बीजों का उपयोग** – प्रारम्भ में अधिक उपज देने वाले गेहूँ और चावल के बीजों को क्रमशः मैक्सिको तथा फिलीपाइन्स से आयात किया गया। जब इन बीजों को देश में बोया गया तो बहुत अच्छी उपज हुयी और इन्हें क्रांतिकारी बीजों के नाम से प्रसिद्धि मिली। बाद के वर्षों में भारत के कृषि अनुसंधान संस्थानों ने स्वयं अपने अधिक उपज देने वाले किस्म के बीजों का विकास किया। कृषि क्षेत्र में हुये इन विकासों के फलस्वरूप पंजाब के लुधियाना जिले में गेहूँ का उत्पादन 13 से 33 क्विंटल प्रति हैक्टेयर बढ़ गया। इसी तरह, गोदावरी व कावेरी के डेल्टाओं में चावल का उत्पादन लगभग दूना हो गया। वर्तमान में 22 कृषि विश्वविद्यालय तथा अनेक कृषि अनुसंधान संस्थान बीजों की उन्नत किस्मों के विकास में लगे हुये हैं। गेहूँ तथा चावल के साथ-साथ ज्वार, बाजरा, मक्का, मूँगफली, कपास, तिलहन व सोयाबीन के उन्नत किस्म के बीजों का भी विकास किया गया है। उन्नत किस्म के बीजों का विकास एक सतत प्रक्रिया है, क्योंकि इनका विकास दो भिन्न प्रकार के बीजों के सम्मिश्रण से होता है और ये सीमित समय तक ही प्रभावपूर्ण होते हैं।

2. **रासायनिक खादों का उपयोग** – कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार रासायनिक खादों के अधिकतम उपयोग से कृषि उत्पादन को तीन गुना तक बढ़ाया जा सकता है। ऐसा पाया गया है कि उपयुक्त दशाओं में एक टन रासायनिक खाद के उपयोग से खाद्यान्नों का पहले से अधिक उत्पादन होता है। भारत में 1950-51 में खादों का कुल उपयोग 69000 टन था जो 1994-95 में 1.3 करोड़ टन से अधिक हो गया। रासायनिक खादों का अधिक तथा असंतुलित उपयोग हानिकारक भी हो सकता है। इसके कुप्रभाव से भूमि बंजर तथा अनुत्पादक भी हो सकती है। अतः रासायनिक खादों का सतर्कता पूर्वक उपयोग करना चाहिये ताकि अधिक व असंतुलित उपयोग को कम किया जा सके।

3. **शीघ्र पकने वाली फसलें** – शीघ्र पकने वाली अनेक फसलों का विकास किया गया है। ये फसलें परम्परागत फसलों की तुलना में पककर तैयार होने में कम समय लेती हैं। उदाहरण के लिये गेहूँ की फसल पहले पांच महीने में पकती थी, जबकि अब उसे पकने में चार माह ही लगते हैं। इससे एक खेत में एक वर्ष में अधिक फसलों को उगाने में मदद मिलती है।

4. **सिंचित क्षेत्र में वृद्धि** – केवल बीजों व खादों की मदद से कृषि के उत्पादन को बढ़ाना कठिन है। बीजों की उन्नत किस्में तथा खादों को पर्याप्त मात्रा में जल की भी आवश्यश्कता होती है। इसलिये, जल की समय पर पर्याप्त आपूर्ति फसलों के लिये आवश्यक है। इसके लिये नहरों, नलकूपों तथा कुओं द्वारा सिंचाई की सुविधा आवश्यक

है। सिंचाई के साधन किसानों को आधुनिक कृषि साधनों से लाभ प्राप्त करने के योग्य बनाते हैं। यद्यपि, निजी स्वामित्व के कुओं और नलकूपों से जल की पूर्ति से सरकारी नहरों की तुलना में अधिक निरापद है।

5. **खेती की मशीनों का उपयोग** – शीघ्र पककर तैयार होने वाली बीजों की किस्मों के उपयोग के कारण फसलों को बोने और उन्हें काटने के समय में कमी हुई है। इससे कृषि मशीनों जैसे ट्रैक्टर, जोतने वाले यंत्रों, हैरो, फसल को काटने तथा गहाई करने वाली मशीनों की आवश्यकता होती है। इन मशीनों की मदद से कम समय में अधिक कार्य किया जा सकता है। इनकी मदद से अब वर्ष में दो-तीन फसलें लेना संभव हुआ है।

6. **कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान** – कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिये नयी विधियों व तकनीक की आवश्यकता होती है जिसे कृषि के क्षेत्र में अनुसंधान द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। देश में स्थापित 22 कृषि विश्वविद्यालयों में नयी विधियों की खोज में निरंतर प्रयास चल रहे हैं ताकि कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सके। इनमें अच्छे किस्म के बीजों को तैयार करना तथा कृषि यंत्रों का विकास जो स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप हो, शामिल है।

7. **बहुफसली कृषि** – 1967-68 में नये किस्म के बीजों तथा रासायनिक खादों की मदद से एक से अधिक शीघ्र पकने वाली फसलों तथा एक फसल से अधिक फसलों को साथ-साथ उगने की दिशा में प्रयोग किये गये थे। आजकल देश के कुल सिंचित क्षेत्र के 20 प्रतिशत भाग पर दो या दो से अधिक फसलों को एक वर्ष में उगाया जा रहा है।

8. **कीटनाशी व फफूँदी नाशी दवाओं का उपयोग** – फसलों को अनेक प्रकार के कीटों व फफूदियों से सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से कीटनाशी व फफूँदी नाशी दवाओं का उपयोग किया गया। किसानों को कीटनाशी दवाओं और उनको प्राप्त करने की जानकारी स्थानीय विकास खण्ड स्तर पर दी गयी।

हरितक्रांति ग्रामीण अर्थव्यवस्था को केवल सीमित क्षेत्रों में ही प्रभावित करने में सक्षम हुयी है। इस क्रांति के बड़े भाग पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक ही सीमित है, क्योंकि इन प्रदेशों के बड़े किसान खादों, बीजों, सिंचाई पर अधिक मात्रा में धन लगा सकते हैं तथा उन्नत किस्म के बीजों, कृषि मशीनों तथा आधुनिक तकनीक का उपयोग करने में समर्थ हैं। देश के अधिकांश किसान जो वर्षा पर निर्भर हैं, उनकी ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। इसके फलस्वरूप किसानों की आय में प्रादेशीय अन्तर निरंतर बढ़ रहा है।

सामान्यतया हरित क्रांति मध्यम वर्षा के प्रदेशों जहाँ धरातलीय व भौम जल सिंचाई की पर्याप्त सुविधायें हैं, में ही अधिक सफल हुई है। अधिक वर्षा वाले प्रदेशों में अक्सर रासायनिक खादें भारी वर्षा के कारण बह जाती हैं इस कारण किसान उनका अधिक

उपयोग नहीं करते। मोटे अनाज को पैदा करने वाले प्रदेशों में रासायनिक खादों का उपयोग कम तथा अनिश्चित वर्षा तथा सिंचाई में जल की कमी के कारण नहीं हो पाता।

> * सामान्यतया हरित क्रान्ति से तात्पर्य तीन प्रकार की तकनीक (1) अधिक उपज वाले बीज (2) अधिक रासायनिक खादों तथा (3) साथ ही सिंचाई द्वारा जल के उपयोग द्वारा प्रति इकाई क्षेत्र में कृषि उत्पादकता बढ़ाने से है।

पाठगत प्रश्न 22.3

1. निम्न में से प्रत्येक को एक या दो वाक्यों में परिभाषित कीजिए–

   (क) शस्यावर्तन _____

   (ख) फसलों की गहनता _____

   (ग) हरित क्रांति _____

2. फसलों की गहनता को प्रभावित करने वाले किन्ही दो कारकों के नाम बताओ–

   (क) _____ (ख) _____

3. भारत के कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिये किये गये किन्हीं दो मुख्य उपायों के नाम बताइये –

   (क) _____ (ख) _____

4. भारत के कौन से दो राज्यों में हरित क्रांति सबसे अधिक सफल हुई है

   (क) _____ (ख) _____

22.12 प्रमुख फसलों का वितरण

भारत एक विशाल देश है। इसमें भौगोलिक दशाओं की विविधता के कारण प्रत्येक प्रकार की फसल देश के किसी न किसी भाग में उगायी जा सकती है। भारत के विभिन्न भागों में पैदा की जाने वाली फसलों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

(i) **खाद्यान्न** – इस वर्ग में खाद्यान्न फसलें जैसे चावल, गेहूँ, ज्वार-बाजरा, मक्का तथा रागी शामिल हैं।

(ii) दालें – इनमें तूर या अरहर, उड़द, मूंग, चना तथा मटर आदि शामिल हैं जो भारत को दालों का सबसे बड़ा उत्पादक व उपभोक्ता देश बनाती हैं। आम लोगों के लिये ये दालें प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं।

(iii) तिलहन – बीज जिनसे तेल निकाला जाता है तिलहन कहलाता है। इनमें मूंगफली, सरसों, राई, बिनौला, सोयाबीन, नारियल, अरण्डी के बीज एवं अलसी आदि शामिल हैं।

(iv) पेय फसलें – इस वर्ग में वे फसलें शामिल हैं, जिनसे पेय बनाये जाते हैं जैसे चाय, कहवा तथा कोको इस वर्ग की फसलें हैं।

(v) रेशेदार फसलें – रेशे प्रदान करने वाली फसलें इस वर्ग में आती हैं। कपास तथा पटसन भारत की पौधों से प्राप्त रेशेदार फसलें हैं। ऊन तथा रेशम जानवरों से प्राप्त रेशे हैं।

(vi) अन्य फसलें – भारत में पैदा की जाने वाली अन्य प्रमुख फसलों में गन्ना, रबर तथा तम्बाकू आदि सम्मिलित हैं।

चावल

चावल भारत की प्रमुख खाद्य फसल है तथा देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग इस पर निर्भर करता है। भारत चीन के बाद संसार का दूसरा सबसे बड़ा चावल उत्पादक देश है। भारत में चावल का प्रतिवर्ष उत्पादन 8 करोड़ टन से अधिक है। भारत में विश्व के कुल उत्पादन का लगभग 21 प्रतिशत चावल पैदा किया जाता है। देश की कुल बोई गयी भूमि के लगभग 25 प्रतिशत भाग पर चावल बोया जाता है।

चावल गर्म व आर्द्र जलवायु का पौधा है। 100 से.मी. से अधिक वर्षा वाले भागों में इसकी फसल अच्छी होती है। लेकिन कम वर्षा वाले भागों में इसे सिंचाई की आवश्यकता होती है। जलोढ़ या चिकनी मिट्टियाँ उपजाऊ होती हैं इन मिट्टियों में जल बनाये रखने की क्षमता अधिक होती है। चावल की खेती के लिये यह आदर्श मिट्टियाँ हैं। श्रम प्रधान फसल होने के कारण चावल मुख्यतया घने आबादी वाले क्षेत्रों में बोया जाता है। भारत में चावल पैदा करने वाले प्रमुख राज्यों में पश्चिम बंगाल, बिहार, आन्ध्र प्रदेश उड़ीसा, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पंजाब हरयाणा हैं। इन राज्यों के अलावा कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, असम तथा जम्मू-कश्मीर में भी चावल उगाया जाता है। हिमालय प्रदेश में खास कर जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में चावल सीढ़ीदार खेतों में उगाया जाता है। पंजाब तथा हरियाणा अपनी आवश्यकता से अधिक चावल पैदा करते हैं। सिंचाई सुविधाओं के उपलब्ध होने के कारण ये राज्य चावल का अधिक उत्पादन करने में समर्थ हुये हैं। चावल देश की जनसंख्या के एक बड़े भाग की खाद्यान्न फसल है नयी कृषि विधियों तथा अधिक उत्पादन देने वाले बीजों की मदद से इसमें प्रति हैक्टेयर उत्पादन को बढ़ाने के प्रयास किये जा रहे हैं। देश में चावल का उत्पादन बढ़ाने के लिये सिंचाई सुविधाओं का विस्तार भी किया जा रहा है। चावल मूलतः

एक खरीफ फसल है, लेकिन प्रायद्वीपीय भारत के डेल्टा प्रदेशों में इसे रबी तथा जायद की फसल के रूप में भी उगाया जा रहा है।

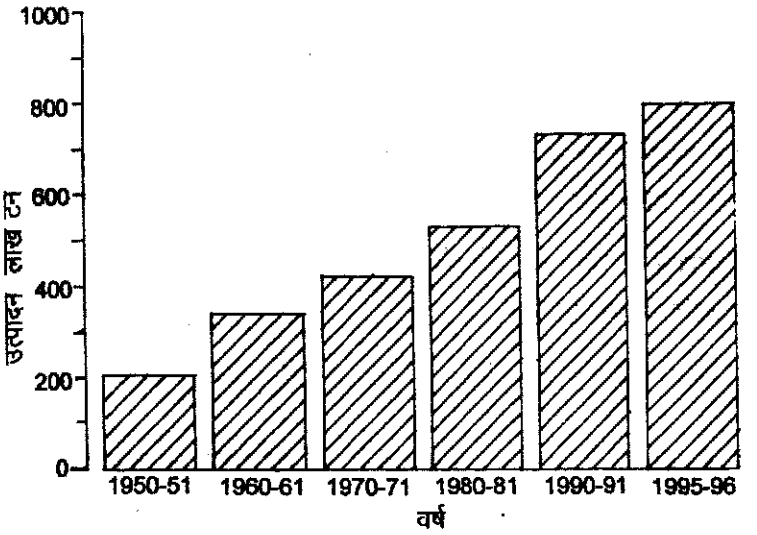

चित्र 22.2 भारत के चावल का उत्पादन

गेहूँ

गेहूँ रबी की एक फसल है तथा भारत में क्षेत्रफल तथा उत्पादन में चावल के बाद इसका दूसरा स्थान है। देश के कुल बोये गये क्षेत्र में 10 प्रतिशत भाग पर इसकी खेती होती है। चीन तथा संयुक्तराज्य अमेरिका के बाद भारत संसार का एक प्रमुख गेहूँ उत्पादक देश है। हालांकि भारत में गेहूँ का प्रति हैक्टेयर उत्पादन बहुत से विकसित देशों से निम्न है। हमारे देश में गेहूँ का प्रति हैक्टेयर औसत उत्पादन केवल 2553 किलोग्राम है। प्रायद्वीपीय प्रदेश के दक्षिणी भागों को छोड़कर गेहूँ भारत के सभी भागों में पैदा किया जाता है। उत्पादन की दृष्टि से उत्तरी भारत गेहूँ उत्पादन में अग्रणी है। देश में गेहूँ के प्रमुख उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा है। मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, गुजरात, राजस्थान तथा दक्कन के पठारी प्रदेश भी गेहूँ के उत्पादक हैं।

गेहूँ एक ऐसी फसल है जिसका उत्पादन हरित क्रांति के दौरान सबसे अधिक बढ़ा है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में गेहूँ के प्रति हैक्टेयर उत्पादन बढ़ाने के लिये अनेक किस्में विकसित की हैं। इन प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप देश में गेहूँ का प्रति हैक्टेयर उत्पादन बढ़ा है और हम देश में खाद्य पदार्थों की कमी को दूर करने में सफल हुये हैं।

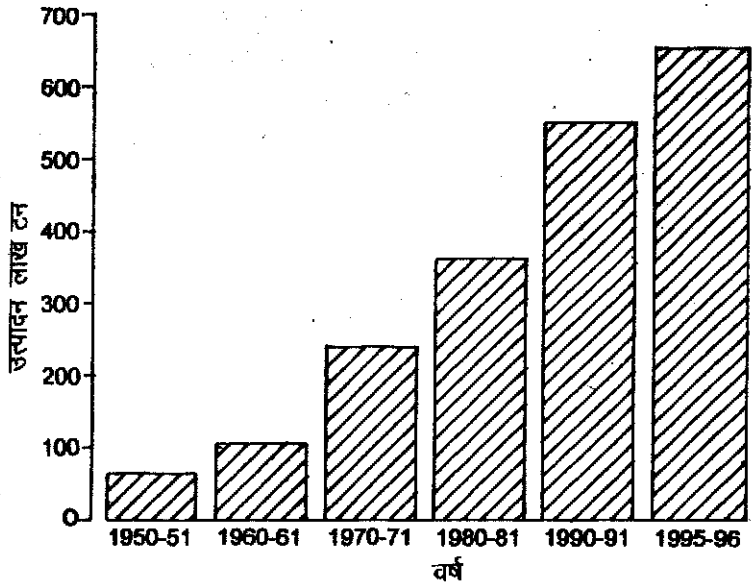

चित्र 22.3 भारत में गेहूँ का उत्पादन

मोटे अनाज

मोटे अनाजों में ज्वार-बाजरा तथा रागी शामिल किये जाते हैं, जिन्हें खाद्यान्नों के रूप में उपयोग किया जाता है। अधिकांश मोटे अनाजों को 50 से.मी. से कम वर्षा की आवश्यकता होती है, साथ ही उन्हें कम उपजाऊ मिट्टियों में भी पैदा किया जा सकता है। गुजरात तथा राजस्थान बाजरा के अग्रणी उत्पादक राज्य हैं। मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र ज्वार के सबसे बड़े उत्पादक राज्य हैं। रागी मुख्यतः आन्ध्रप्रदेश तथा कर्नाटक के शुष्क भागों में पैदा की जाती है। यद्यपि मोटे अनाजों का उत्पादन चावल तथा गेहूँ के उत्पादन से काफी कम है। ये फसलें अपने उत्पादन क्षेत्रों के गरीब लोगों की प्रमुख खाद्यान्न हैं। यद्यपि रागी को ज्वार से अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है, जबकि बाजरा कम वर्षा वाले प्रदेशों में उगाया जाता है।

तिलहन

संसार में तिलहनों के अन्तर्गत सबसे अधिक क्षेत्र भारत में है। यह संसार के कुल खाद्य तेलों के उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत भाग पैदा करके तिलहनों का सबसे बड़ा उत्पादक भी है। भारत में पैदा किये जाने वाले प्रमुख तिलहनों में मूँगफली, सरसों, सूरजमुखी, सोयाबीन, अलसी तथा अरण्डी के बीज शामिल हैं। तिलहनों से खाद्य व अखाद्य तेल प्राप्त किये जाते हैं। ऊपर

दिए तिलहनों में अलसी तथा अरण्डी के बीजों से न खाने योग्य तेल प्राप्त किया जाता है तथा शेष तिलहनों से खाने योग्य तेल निकाला जाता है। अधिकांश तिलहनों को शुष्क फसलों के रूप में पैदा किया जाता है। राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश तथा आन्ध्रप्रदेश भारत के प्रमुख तिलहन उत्पादक राज्य हैं। हरित क्रांति का एक विपरीत प्रभाव यह पड़ा है कि भारत में तिलहनों के अन्तर्गत क्षेत्र पहले की तुलना में हो गया है। हालांकि, सरकार के प्रयत्नों से उन्नत किस्म के तिलहनों के विकास के कारण तिलहनों का उत्पादन बढ़ा है। देश में तिलहनों का उत्पादन नीचे चित्र 22.4 में दिया गया है। मूंगफली मुख्यत: खरीफ फसल है। सरसों व राई (तराकिरा) रबी की फसलें हैं। नारियल केरल के लिये खाद्य तेल का प्रमुख स्रोत है, इसीलिये केरल को **नारियल की भूमि** कहते हैं।

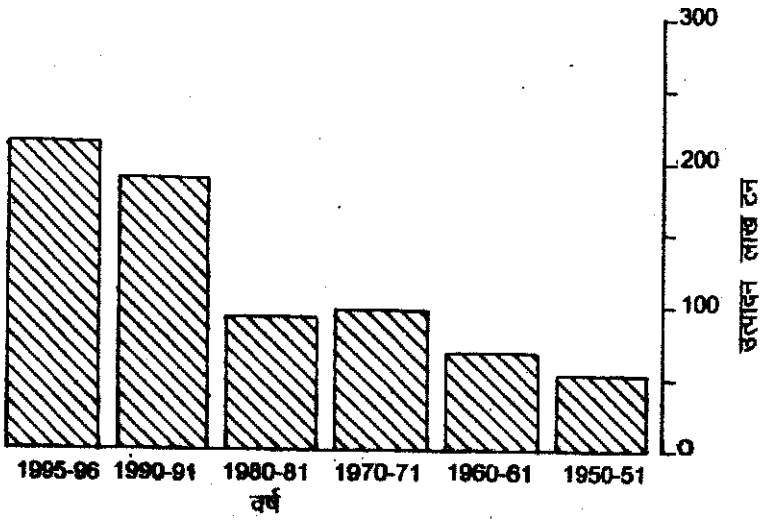

चित्र 22.4 भारत में तिलहनों का उत्पादन

गन्ना

गन्ना भारत की एक प्रमुख नकदी फसल है तथा संसार में गन्ने के अन्तर्गत आने वाला सबसे बड़ा क्षेत्र हमारे देश में ही है। भारत संसार के गन्ना पैदा करने वाले देशों में अग्रणी है। इस फसल के अच्छे उत्पादन के लिये ऊँचे तापमान, अच्छी सिंचाई सुविधाओं तथा उपजाऊ मिट्टियों की आवश्यकता होती है।

यद्यपि यह भारत के अनेकों राज्यों में उगाया जाता है, लेकिन उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा आन्ध्र प्रदेश गन्ने के उत्पादन के अग्रणी राज्य हैं।

कोयम्बटूर में स्थापित गन्ना अनुसंधान संस्थान ने गन्ने की अनेक नई किस्में विकसित की

हैं। गन्ने का उपयोग चीनी तथा गुड़ बनाने में किया जाता है। देश में कुल गन्ना उत्पादन का काफी बड़ा भाग गुड़ बनाने में उपयोग किया जाता है। चित्र 22.5 भारत में गन्ने के उत्पादन को दिखाया गया है।

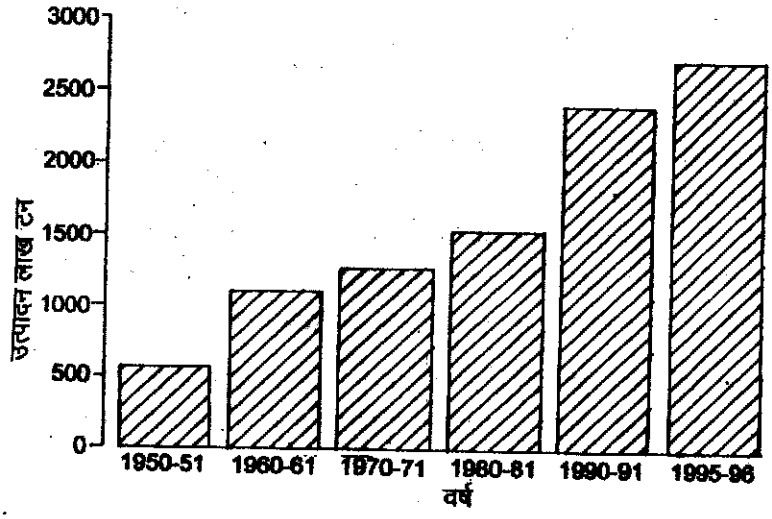

चित्र 22.5 भारत के गन्ने का उत्पादन

चाय

चाय भारत की एक प्रमुख निर्यात फसल है तथा इसके निर्यात से देश को बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। गर्म जलवायु व अधिक वर्षा वाले पहाड़ी ढाल चाय की खेती के लिये सर्वोत्तम हैं। भारत में चाय के बागानों के अन्तर्गत 3 लाख हैक्टेयर से अधिक भूमि है। इनमें से अधिकतर बागान असम की सुरमा तथा ब्रह्मपुत्र घाटी में स्थित है। अधिकांश चाय बागानों को पहाड़ी ढालों पर लगाया गया है। पश्चिमी बंगाल के उत्तरी भागों (दार्जिलिंग व जलपाई गुड़ी), दक्षिणी भारत में नीलगिरि के पहाड़ी ढालों तथा पश्चिमी व मध्य हिमालय के कांगड़ा व कुमाँऊ प्रदेशों में भी चाय पैदा की जाती है। भारत संसार में चाय का न केवल सबसे बड़ा उत्पादक है, बल्कि स्थानीय बढ़ती मांग के बावजूद संसार का सबसे बड़ा निर्यातक देश भी है। चाय के उत्पादन को चित्र 22.6 में दिखाया गया है।

कहवा

भारत में कहवा का पौधा सबसे पहले सत्रहवी शताब्दी में ईस्ट इण्डिया कम्पनी लायी। हम संसार के कुल उत्पादन का लगभग 2 प्रतिशत कहवा पैदा करते हैं। भारतीय कहवा अच्छा होता है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी अच्छी कीमत मिलती है तथा हम कहवा के निर्यात से

बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करते हैं। भारत में पैदा होने वाले कहवा का लगभग आधा भाग निर्यात कर दिया जाता है। कहवा को गर्म आर्द्र जलवायु के साथ-साथ छाया के नीचे ऊँचे तापमान की आवश्यकता होती है। चाय की तरह कहवा भी पर्वतीय ढलानों पर उगाया जाता है। लेकिन इनमें पौधों को बड़े पेड़ों की छाया के नीचे उगाते हैं। भारत में कर्नाटक कहवा उत्पादन में अग्रणी राज्य हैं। केरल तथा तमिलनाडु का स्थान इसके बाद आता है। मिजोरम में भी हाल के वर्षों में कहवा की कृषि प्रारम्भ की गयी है।

कपास

कपास की अच्छी उपज के लिये लगभग 80 से.मी. वर्षा तथा 150 दिन तक बादलों से रहित मौसमी दशा आवश्यक होती है। साथ ही अधिक नमी धारणा करने वाली गहरी मिट्टियाँ कपास कृषि के लिये आदर्श होती हैं। यद्यपि प्रायद्वीपीय पठार की काली मिट्टी इसकी कृषि के लिये एक आदर्श मिट्टी है, लेकिन सिंचाई की मदद से जलोढ़ मिट्टियों में भी कपास सफलता पूर्वक पैदा की जा सकती है।

कपास भारत की एक प्रमुख नकदी फसल है। यह सूती वस्त्र उद्योग का कच्चा माल है। यद्यपि कपास का भारत में उत्पादन संतोषजनक है, लेकिन इसकी गुणवत्ता ठीक नहीं है। भारत में पैदा की जाने वाली अधिकांश कपास छोटे व मध्यम रेशे वाली है। देश से घटिया गुणवत्ता वाली कपास का निर्यात कर दिया जाता है, क्योंकि इसे ऊन के साथ मिलाने में उपयोग किया जाता है। इससे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी अच्छी कीमत मिल जाती है, हालांकि अच्छा सूती कपड़ा बनाने के लिये लम्बे रेशे वाले कपास का आयात करना पड़ता है। आजकल लम्बे रेशे के कपास की खेती पंजाब तथा हरियाणा में की जाती है। भारत के कपास पैदा करने वाले प्रमुख राज्य महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब व हरियाणा हैं। कर्नाटक, तमिलनाडु तथा मध्यप्रदेश में भी कपास पैदा की जाती है। चित्र 22.6 में कपास के उत्पादन के आकड़ों का अध्ययन कीजिये।

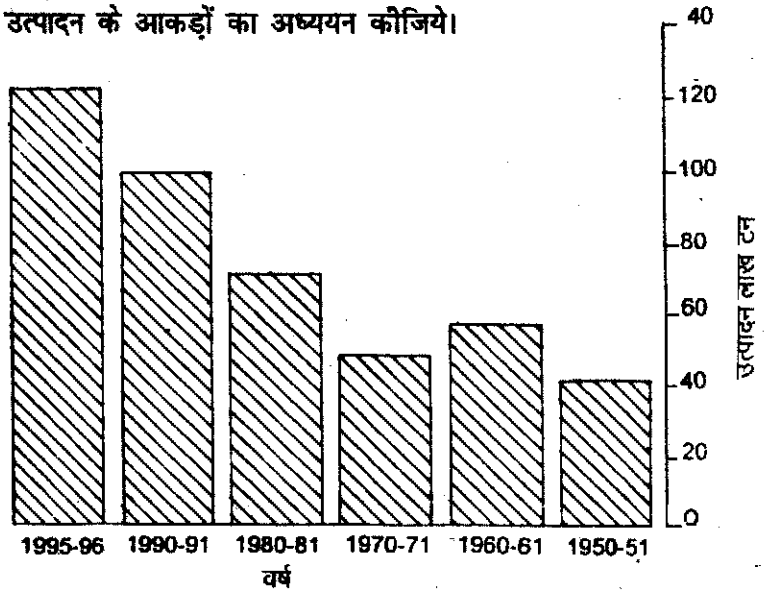

चित्र 22.6 भारत में कपास का उत्पादन

पटसन

पटसन भी एक रेशेदार फसल है तथा इसे भारत का स्वर्णिम तंतु कहते हैं। यह फसल अभी भी काफी मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करती है। पटसन केवल पश्चिम बंगाल, असम, बिहार तथा उड़ीसा में उगाया जाता है, क्योंकि इसकी पैदावार के लिये उपयोगी दशायें केवल इन्हीं राज्यों में पायी जाती हैं। इन दशाओं में ऊँचे तापमान, भारी वर्षा तथा सुप्रवाहित उपजाऊ जलोढ़ मिट्टियाँ शामिल हैं। पटसन मिट्टी के उपजाऊपन को बड़ी तीव्रता से कम करती है, इसलिये इसे ऐसे प्रदेशों में उगाया जाता है, जहाँ सतत बाढ़ें आती हैं तथा नवीन मृत्रिका की परत बार-बार जमा हो जाती है। विश्व बाजार में पटसन की घटती मांग के कारण, पटसन की उपज का क्षेत्र कम होना प्रारम्भ हो गया है। पटसन के धागे को कृत्रिम रेशों जो सस्ते तथा अधिक मजबूत भी होते है, से कठिन प्रतियोगिता का सामना करना पड़ रहा है। चित्र 22.7 में पटसन उत्पादन दिखाया गया है। स्वतंत्रता के बाद के प्रारम्भिक वर्षों में भारत में पटसन का क्षेत्र व उत्पादन काफी कम हो गया था यद्यपि, शीघ्र ही हम पटसन उत्पादन में आत्मनिर्भर ही नहीं हुए हैं, बल्कि कुल उत्पादन में बांग्लादेश को पीछे कर दिया।

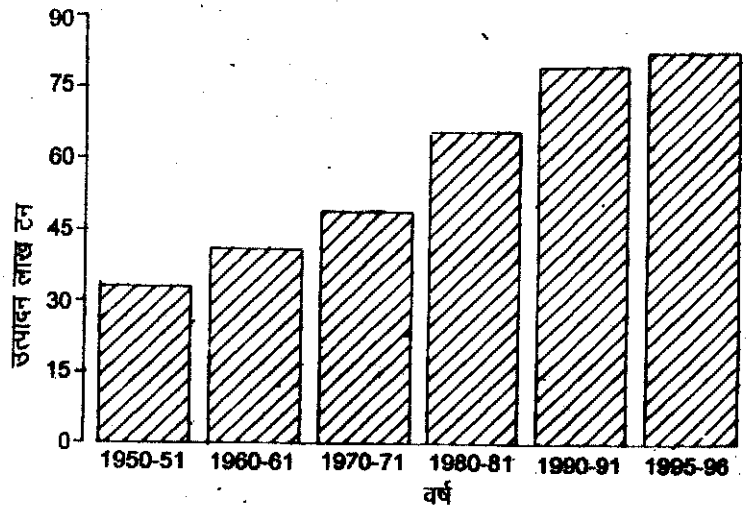

चित्र 22.7 भारत में पटसन उत्पादन

तम्बाकू

भारत चीन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद तम्बाकू का तीसरा बड़ा उत्पादक देश है। तम्बाकू की अच्छी उपज के लिये पाला रहित गर्म जलवायु तथा पोटाश युक्त मिट्टी

उपयुक्त होती है। यह फसल भारत के अनेक भागों में उगायी जाती है। आन्ध्र प्रदेश, गुजरात तथा मध्यप्रदेश तम्बाकू उत्पादन के अग्रणी राज्य है। भारत में पैदा की जाने वाली तम्बाकू से सिगरेट व बीड़ियाँ बनायी जाती हैं।

कुछ अन्य फसलें

ऊपर वर्णित फसलों के अतिरिक्त भारत का अन्य फसलों के उत्पादन में भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। देश लम्बे समय से गर्म मशालों के उत्पादन के लिये प्रसिद्ध रहा है। भारत में गर्म मसालों में काली मिर्च, लोंग व इलाइची आदि का उत्पादन बड़ी मात्रा में किया जाता है। देश में केरल व कर्नाटक गर्म मसालों के उत्पादन में अग्रणी है।

भारत संसार का एक अग्रणी फल उत्पादक देश है। यहाँ अनेक प्रकार के उष्ण व शीतोष्ण कटिबन्धीय फलों को पैदा किया जाता है। केला, आम तथा अनन्नास भारत में पैदा किये जाने वाले उष्ण कटिबन्धीय फल है। केले का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य महाराष्ट्र है। भारत में आमों की अनेक जातियाँ विभिन्न क्षेत्रों में पैदा की जाती है। उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र तथा पश्चिमी बंगाल आम के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। अनन्नास मुख्य रूप से उत्तरी पूर्वी राज्यों में उगाया जाता है। शीतोष्ण कटिबन्धीय फलों में सेव, लीची आदि हिमाचल प्रदेश तथा संतरे महाराष्ट्र व सिक्किम में पैदा किये जाते हैं। महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा आन्ध्रप्रदेश में बड़ी मात्रा में अंगूर पैदा किया जाता है। अनेक प्रकार के सूखे फल भी देश में पैदा किये जाते हैं। शीतोष्ण कटिबन्ध के सूखे फलों में बादाम तथा खूबानी पश्चिमी हिमालय प्रदेश तथा काजू केरल व गोआ में पैदा किये जाते हैं।

कोशकीट पालन तथा मधुमक्खी पालन

रेशम के कीड़ों को पालना तथा उनसे रेशम प्राप्त करने की क्रिया को कोशकीट पालन कहते हैं। यह भारत के कुछ भागों में एक महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया है। देश में कच्चा रेशम पैदा करने वाले महत्वपूर्ण राज्य असम, कर्नाटक, जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा बिहार हैं।

मधुमक्खियों का पालन और उनसे शहद प्राप्त करने को मधुमक्खी पालन कहते हैं। भारत के अनेक भागों में इसका प्रारम्भ छोटे किसानों तथा भूमिहीन लोगों की आय बढ़ाने के लिये किया गया है। इसे अधिक लागत के बिना छोटे पैमाने पर प्रारम्भ किया जा सकता है। यह क्रिया हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में अधिक लोकप्रिय हुई है।

पाठगत प्रश्न 22.4

1. (क) भारत की दो महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसलों के नाम बताइये।

   (i) _____ (ii) _____

   (ख) उत्तर तथा दक्षिण भारत से एक-एक राज्य का नाम बताइये जो चाय पैदा करते हैं।

   (i) _____ (ii) _____

   (ग) भारत का संसार के चाय के उत्पादन में कौन सा स्थान है?

   _____

   (घ) भारत के कृषि क्षेत्र के कितने भाग पर गेहूँ बोया जाता है?

   _____

   (ङ.) भारत का कौन सा राज्य गन्ने के उत्पादन में अग्रणी है?

   _____

2. पटसन के उत्पादन के लिये आवश्यक दो भौगोलिक दशायें बताइये?

   (i) _____ (ii) _____

22.12 पशु सम्पदा

खाद्य समस्या के समाधान में पशु संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वे अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ तथा उद्योग धंधों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं। दूध, घी, मक्खन, मांस, चमड़ा, ऊन तथा रेशम सभी पशुओं से प्राप्त होते हैं। भारत के कृषि क्षेत्र के लिये आवश्यक शक्ति की बड़ी मात्रा इनसे प्राप्त होती है। यद्यपि भारत सरकार कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिये मशीनों के उपयोग को प्रोत्साहन दे रही है। देश के किसान आज भी अपने कृषि कार्यों के लिये बहुत अधिक भार ढोने वाले पशुओं पर निर्भर करते हैं। कृषि के उत्पादन का लगभग 26 प्रतिशत भार पशु सम्पदा क्षेत्र से प्राप्त होता है। पशुओं से अनेक प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं। गाय, भैंस, भेड़, बकरी, ऊँट आदि से दूध प्राप्त होता है। दूध पोषक खाद्य है। 1994-95 में भारत में दूध का उत्पादन 6.35 करोड़ टन था। पशुओं का उपयोग कृषि कार्यों जैसे खेतों को जोतने, बोने, कुओं से पानी खींचने तथा

भार ढोने में किया जाता है। उनसे खाल या चमड़ा प्राप्त होता है जो चमड़ा उद्योग का कच्चा माल है। खाल तथा चमड़े का हमारे देश से बड़ी मात्रा में निर्यात किया जाता है। भेडों, बकरियों तथा ऊँटों से ऊन प्राप्त होती है। भारत ऊन के कुल उत्पादन का 25 प्रतिशत भाग निर्यात करता है। पशुओं का गोबर बहुत ही उपयोगी खाद बनाने में मदद करता है, जिससे मिट्टी का उपजाऊपन बनाये रखने में मदद मिलती है, साथ ही इससे खाना पकाने की गैस भी उपलब्ध होती है।

भारत में पशुओं का आर्थिक महत्व

* कृषि क्षेत्र को शक्ति उपलब्ध कराना
* गोवर की खाद का स्रोत
* खालों की उपलब्धता
* ऊन, रेशम तथा मांस आदि की उपलब्धि

यद्यपि भारत में ही संसार के सर्वाधिक पशु हैं, लेकिन पशु उत्पादन के अग्रणी देशों में हमारी गणाना नहीं की जाती। भारत की पशु उत्पादन में इस पिछड़ी अवस्था का प्रमुख कारण भारतीय पशुओं की घटिया नस्ल है। भारत में प्रति गाय दूध का औसत उत्पादन न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया, डेनमार्क तथा इजराइल जैसे देशों के मुकाबले अत्यधिक कम है। भारत में जब दूध का प्रति गाय प्रतिदिन औसत उत्पादन 2 लिटर से कम है, वहीं यह आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड में 30 से 40 लीटर तक ऊँचा है। भारत में लगभग 19.6 करोड़ पशु हैं। जो संसार के कुल पशुओं की संख्या का 21 प्रतिशत भाग है। इसके अलावा हमारे यहाँ संसार की 18 प्रतिशत बकरियाँ, 4 प्रतिशत भेड़ें तथा 57 प्रतिशत भैंसें हैं।

जैसा कि ऊपर वर्णित है कि भारत में पशु संसाधनों विशेषकर गायों की नस्ल घटिया है। स्वतंत्रता के बाद से पशु संम्पदा के संवर्धन के लिये अधिक ध्यान दिया जा रहा है तथा अच्छी नस्ल की गायें जो अधिक दूध पैदा करने में समर्थ हैं, को देश में पालना प्रारम्भ किया गया है। दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिये सरकार ने एक बहुत ही महत्वाकांक्षी योजना, जिसे 'आपरेशन फ्लड' कहते हैं, प्रारम्भ की है। इन प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप, स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में डेयरी उद्योग में अत्यधिक विकास हुआ है तथा आज भारत संसार के अग्रणी दुग्ध उत्पादक देशों में एक है।

शुष्क जलवायु पशुपालन के लिये एक आदर्श जलवायु है। भारत के बड़ी पशु संख्या वाले प्रमुख क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात राज्य तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश हैं। इन क्षेत्रों में कम वर्षा होने के कारण अच्छे चरागाहों की कमी है। ये क्षेत्र अपने पशुओं को खिलाने के लिये चारा उगाते हैं। भारत में 100 हैक्टेयर भूमि पर औसतन 130 पशु

पाले जाते हैं। पशुओं की संख्या की तुलना में चरागाहों के अन्तर्गत क्षेत्र बहुत ही कम हैं। शताब्दियों से भारतीय किसान खेतों पर काम आने वाले पशुओं का पालन करता आ रहा है। दोनों की भागीदारी से कृषि उत्पाद बढ़ा है तथा किसान की आर्थिक स्थिति में विशेष सुधार हुआ है।

पाठगत प्रश्न 22.5

1. प्रत्येक के साथ कोष्ठक में दिये गये उत्तरों में से उपयुक्त उत्तर चुनिये-
   (क) भारत में कुल कृषि उत्पादन का कितने प्रतिशत भाग पशु सम्पदा द्वारा प्राप्त होता है? (15 प्रतिशत, 20 प्रतिशत, 26 प्रतिशत, 35 प्रतिशत)
   (ख) भारत में पैदा की जाने वाली ऊन का कितना भाग निर्यात किया जाता है? (10 प्रतिशत, 25 प्रतिशत, 35 प्रतिशत, 45 प्रतिशत)
   (ग) संसार की कुल पशु संख्या का कितने प्रतिशत भाग भारत में पाया जाता है? (16, 21, 26, 35)

22.13 भारत में पशु सम्पदा का वितरण

पशु - भारत में पशु संसाधनों में सबसे महत्वपूर्ण गाय-बैल तथा भैंसें हैं। गायें दूध देती हैं इससे जो बछड़ा पैदा होता है वह बैल बन जाता है। भारतीय कृषि में बैलों का भार ढोने व खेत जोतने में बड़ी संख्या में उपयोग किया जाता है। भारत में गाय-बैलों की सबसे अधिक संख्या उत्तर प्रदेश में है। गाय-बैलों की कुल संख्या के 15 प्रतिशत इस राज्य में हैं। मध्य प्रदेश (14%) बिहार (9%) महाराष्ट्र (8.8%), राजस्थान (7.3%) में है। आन्ध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा तमिलनाडु देश के अन्य राज्य हैं जहाँ गाय-बैलों की बड़ी संख्या पायी जाती है। यद्यपि भारत में गायों की संख्या बहुत अधिक है, प्रति गाय दूध का उत्पादन अपेक्षाकृत कम है। भारत में प्रति गाय दूध का औसत वार्षिक उत्पादन नीदरलैण्ड के 4200 लीटर की तुलना में केवल लगभग 188 लीटर है। भारतीय गायों से दूध का उत्पादन संसार में सबसे कम है। डेयरी विकास की योजनाओं के अंतर्गत, जर्सी, होल्स्टीन तथा फ्रेजियन नस्ल की गायें आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड से मंगायी गयी हैं तथा उनको यहाँ पालना प्रारम्भ किया गया है। इसके साथ ही स्थानीय नस्लों से वर्णसंकर नस्लें बनाकर सुधारने के प्रयास किये जा रहे हैं। स्थानीय नस्लों में गिर, कांक्रेज, सिंधी, देवानी, मालवी तथा साहीवाल कुछ अच्छी नस्ल की गायें हैं। ये अब प्रति दुग्ध ऋतु में 2000 लिटर तक दूध देती हैं।

भैंसें – भारत में बड़ी संख्या में भैंसें पाली जाती हैं तथा उन्हें मुख्यतः दूध के लिये पाला जाता है। वास्तव में भैंसों का दूध के जानवर के रूप में गायों की तुलना में महत्व अधिक है। भैंस के दूध में गाय के दूध से अधिक चिकनाई होती है। देश में पैदा होने वाले कुल दूध का लगभग 53 प्रतिशत भाग भैंसों से प्राप्त होता है। जाफरावादी, मुर्रा, भदावरी, सुर्ती, मेहसाना तथा रावी आदि अनेक नस्ल की भैंसें हैं जो अधिक दूध देने के लिये प्रसिद्ध हैं। अच्छी नस्ल की भैंसें दूध की एक ऋतु में लगभग 1500 लीटर दूध देती हैं। भारत की भैंसों की बड़ी संख्या उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, मध्य प्रदेश तथा गुजरात राज्यों में है।

भेड़ें – भारत में लगभग 4.5 करोड़ भेड़ें हैं तथा मुख्य रूप से देश के ठण्डे और शुष्क प्रदेश भेड़ पालने के लिए आदर्श है। गर्म व आर्द्र जलवायु भेड़ों के लिय हानिकारक हैं, क्योंकि ऐसी जलवायु में खुरों की बीमारी हो जाती है। एक वर्ष में एक भेड़ से औसतन 1 किलो ग्राम ऊन प्राप्त होती है। भारत में पैदा की गयी आधी से अधिक ऊन निर्यात कर दी जाती है। भेड़ों की नस्ल सुधारने के प्रयास भी किये जा रहे हैं। राजस्थान में अम्बिका तथा हरियाणा के हिसार में भेड़ अनुसंधान तथा प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये गये हैं। राजस्थान, जम्मू व कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश राज्यों में बड़ी संख्या में भेड़ें पाली जाती हैं। हाल के वर्षों में ऊन के उत्पादन को बढ़ाने के लिये नयी नस्ल की भेड़ों को न्यूजीलैण्ड तथा जर्मनी से मंगाया गया है तथा हिमालय प्रदेश में उनका पालन प्रारम्भ किया गया है।

अन्य पशु – अन्य पशुओं में बकरियाँ मुख्यरूप से मांस व दूध के लिये पाली जाती हैं तथा बोझा ढोने वाले जानवरों को देश के कुछ भागों में भार ढोने के लिये उपयोग में लाया जाता है। राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश तथा उत्तर प्रदेश राज्यों में बकरियाँ बड़ी संख्या में पाली जाती हैं। भार ढोने वाले जानवरों में ऊँट को राजस्थान तथा गुजरात एवं टट्टुओं व याक को उत्तर के पर्वतीय प्रदेशों में पाला जाता है।

मुर्गी पालन – देश के अनेक भागों में मुर्गीपालन भी एक प्रमुख व्यवसाय हो गया है। भारत में 25 करोड़ से अधिक मुर्गियां हैं तथा उन्हें अण्डों व मांस के लिये पाला जाता है। मुर्गियों की सबसे अधिक संख्या आन्ध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, कर्नाटक और पंजाब राज्यों में है।

22.14 भारत में पशु संसाधनों की विशेषतायें एवं समस्यायें

भारत में संसार के सर्वाधिक पशु हैं। हालाँकि, देश में पशुओं की उत्पादकता बहुत ही निम्न है। जानवरों की खराब दशाओं तथा दूध के निम्न उत्पादन के प्रमुख कारणों में से कुछ नीचे दिये जा रहे हैं।

1. पशुओं का भूमि पर दबाव अधिक है। खाद्य पदार्थों के उत्पादन के अतिरिक्त छोड़ी गयी भूमि बड़ी संख्या में पाली जाने वाली पशु संख्या को पर्याप्त मात्रा में चारा पैदा

करने में समर्थ नहीं है। दूध देने वाले तथा भार ढोने वाले पशुओं के लिये चारे की कमी के कारण उन्हें पूरा भोजन नहीं मिलता तथा वे कमजोर हैं।

2. भारतीय पशुओं की नस्लें भी बहुत अच्छी नहीं हैं। सभी प्रकार एवं गुणों वाले पशुओं को चरागाहों में साथ-साथ चराया जाता है। इसके परिणाम स्वरूप पशुओं की गुणवत्ता में घटिया नस्ल के साड़ों के द्वारा प्रजनन के कारण कमी आती है। देश में कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों की कमी है।

3. साथ-साथ चरने, गन्दा पानी पीने, सड़ी गली चीजों को खाने तथा अन्धेरे से युक्त गन्दे स्थानों में रहने से उन्हें अनेक बीमारियाँ लग जाती हैं।

4. शीतोष्ण जलवायु पशु पालन के लिये आदर्श मानी जाती है। लेकिन भारत की जलवायु उष्ण कटिबन्धीय है। इसीलिये पशु सामान्यतया कमजोर है तथा उन्हें बीमारियाँ लगने के अधिक आसार होते हैं।

5. देश में पशुओं के पालने की उचित सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं। भारत में चरागाहों की सामान्यत: कमी है। किसानों को पशुपालन कला की तकनीक के बारे में अधिक जानकारी नहीं है। बीमार पशुओं की चिकित्सा के लिये पशु चिकित्सालय कम और दूर-दूर स्थापित हैं। इन कारणों के फलस्वरूप भारत में पशुपालन का वाणिज्यिक स्तर पर विकास नहीं हो पाया है, जैसा कि अन्य कुछ देशों में हुआ है।

भारत में पशुओं की समस्यायें

* पोषक चारे की कमी
* पशुओं की घटिया नस्ल
* देश की उष्णकटिबन्धीय जलवायु
* कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों की कमी
* पशु-चिकित्सालयों व चिकित्सकों की कमी

22.15 पशु सम्पदा की गुणवत्ता के सुधार के उपाय

यदि देश में पशु संसाधनों में सुधार लाना है तो पशुपालन को वैज्ञानिक ढंग से करने की आवश्यकता है। केन्द्रीय व अनेक राज्य सरकारों ने देश में पशुओं की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिये अनेक कदम उठाये हैं, इनमें से कुछ नीचे दिये गये हैं -

1. **पशुओं की नस्लों में सुधार** - पशुओं की नस्लों को सुधारने के लिये पशु प्रजनन फार्म सूरतगढ़ (राजस्थान), कोरापुट (उड़ीसा), धाम रोड (गुजरात) तथा अलामाधी (तमिलनाडु) के साथ-साथ अनेक स्थानों पर स्थापित किये गये हैं।

2. **अच्छी नस्ल के पशुओं का आयात** – सरकारी फार्मों पर साँडों की अच्छी नस्लों के विकास के लिये अच्छी नस्लों के साँडों को आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से मंगाया गया है। सरकारी फार्मों पर अच्छी नस्लों के साँडों को विकसित करके देश के विभिन्न भागों में पालतू पशुओं की गुणवत्ता को सुधारने के लिये वितरित किया गया है। इस संबंध में देश की जरूरतों को ध्यान में रखते हुये इन प्रयत्नों के और अधिक विस्तार की अपेक्षा है।

3. **पशुओं की बीमारियों पर नियंत्रण** – पशुओं को अनेक प्रकार की बीमारियों से बचाने के उद्देश्य से देश के अनेक भागों में पशु चिकित्सालय स्थापित किये जा रहे हैं। वर्तमान में देश में 8000 से अधिक ऐसे चिकित्सालय हैं।

4. **पशु संवर्द्धन की योजनायें** – विदेशी सहयोग व आर्थिक मदद से हिसार (हरियाणा), वरपेटा (आन्ध्र प्रदेश), शिलांग (मेघालय) तथा पटियाला (पंजाब) में पशु संवर्द्धन की योजनायें चालू की जा रही हैं।

5. **अच्छी गुणवत्ता वाले चारे की व्यवस्था** – पशुओं के चारे व खाद्य पदार्थों आदि को पैदा करने व भण्डार करने के फार्म देश के विभिन्न भागों में स्थापित किये गये हैं।

> पशुओं की दशा सुधारने के लिए सरकार ने कुछ उपाय किए हैं। ये हैं –
>
> * पशुओं की नस्लों में सुधार
> * अच्छी नस्लों के पशुओं का आयात
> * पशु चिकित्सालयों की व्यवस्था
> * पोषक चारे व खाद्य पदार्थों की व्यवस्था
> * पशु संवर्द्धन की योजनायें

22.16 भारत में डेयरी उद्योग

भारत में दुग्ध व्यवसाय का विकास वैज्ञानिक तथा वाणिज्यिक स्तर पर नहीं हुआ है। अधिकांशतः दूध के लिये पशु-पालन कृषि की एक सहायक क्रिया के रूप में ही रहा है। देश में डेयरी उद्योग इसीलिये संयुक्त राज्य अमेरिका, डेनमार्क, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड के डेयरी उद्योग की तुलना में पिछड़ी हुयी अवस्था है।

स्वतंत्रता के बाद और विशेषरूप से हरित क्रांति के बाद भारतीय सरकार ने डेयरी उद्योग के विकास की तरफ काफी ध्यान दिया है। कृषि विधियों तथा पशुओं की नस्लों में हुये सुधारों से इस दिशा में तेजी से विकास हुआ है। देश में दुग्ध उत्पादन में हुयी तीव्र वृद्धि को स्वेत क्रांति कहते हैं। अनेक योजनाओं के द्वारा छोटे और सीमान्त किसानों को अच्छी

नस्ल के पशुओं को पालने के लिये प्रोत्साहित किया गया है। अच्छी नस्लों की गायों और भैंसों को सहकारी संस्थानों द्वारा किसानों व दुग्ध उत्पादकों को उपलब्ध कराया गया है। सरकार ने बहुत से बड़े गावों में दुग्ध संकलन केन्द्र स्थापित किये हैं तथा ये केन्द्र गांव के किसानों द्वारा पैदा किये गये दूध के विपणन में मदद करते हैं।

ओद्यौगिक केन्द्रों तथा शहरों की वृद्धि से दूध तथा दूध से बने पदार्थों की मांग तेजी से बढ़ रही है। 1951 में भारत में दूध का उत्पादन 1.74 करोड़ टन था, जो 1979-80 में बढ़कर 3.02 करोड़ टन तथा 1994-95 में 6 करोड़ टन से अधिक हो गया। भारत संसार के कुल दुग्ध उत्पादन का 6 प्रतिशत का उत्पादन करता है। भारत के कुल दूध उत्पादन का 53 प्रतिशत भाग भैंसों से प्राप्त होता है। गायें 43 प्रतिशत तथा बकरियाँ व भेड़ें आदि शेष 4 प्रतिशत दूध पैदा करती हैं। देश में दूध उत्पादन के अग्रणी राज्य उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, तमिलनाडु तथा मध्य प्रदेश हैं। 1984-85 में प्रति व्यक्ति दूध का सबसे अधिक उत्पादन पंजाब का था। हरियाणा, राजस्थान तथा हिमाचल प्रदेश का स्थान क्रमशः इसके बाद आता है। सबसे बड़े दुग्ध उत्पादक होने के बावजूद उत्तर प्रदेश में प्रति व्यक्ति दूध का उत्पादन काफी नीचा (59.8 किलो.) है, जो पंजाब के प्रतिव्यक्ति उत्पादन (213% किलो.) का लगभग चौथाई है। अलीगढ़ के कवेन्टर्स, आगरा के राधास्वामी संस्था, मुम्बई का अरी आनन्द का पोलसन तथा मैसूर का रायनकेरा भारत की महत्वपूर्ण डेरी संस्थाएं हैं। गहन डेयरी विकास योजनाओं के फलस्वरूप भारत में दूध का उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है। दूध के उत्पादन बढ़ाने तथा शहरों में उसे उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सरकार ने एक योजना तैयार की है। जिसे **'आपरेशन फ्लड'** कहते हैं। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों से दूध को एकत्रित करना, सुरक्षित बनाये रखने के लिये उसे संशोधित करना तथा मांग के क्षेत्रों में शीतलन की व्यवस्था वाले टैंकरों द्वारा दूध को भेजना सम्मिलित है, इससे न केवल शहरों में दूध की आपूर्ति बढ़ी है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों के कार्यरत छोटे दूध कार्यकताओं को बाजार भी उपलब्ध हुआ है। आज भारत, संसार का दूसरा सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश बन गया है तथा डेयरी उद्योग के क्षेत्र में कार्यरत कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार हम अब ऐसी स्थिति में हैं कि दूध तथा दूध से बने पदार्थों का यूरोप के विकसित देशों को निर्यात कर सकते हैं। डेयरी उद्योग के बढ़ते विकास से एक दुग्ध ग्रिड का विकास हुआ है। महानगर इस ग्रिड के केन्द्रीय बिन्दु होने तथा मध्यम आकार के नगर व कस्बे पूर्ति केन्द्र का कार्य करेंगे। दूध के ग्रिड से देश के महानगरों में दूध की पर्याप्त आपूर्ति सम्भव हुयी है।

* देश में दूध के उत्पादन में हुयी तीव्र वृद्धि को श्वेत क्रांति कहते हैं।
* शहरों में दूध की बढ़ती उपलब्धता के उद्देश्य से बने कार्यक्रम को आपरेशन फ्लड कहते हैं।

22.17 भारत में मत्स्यन

मछली प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है तथा यह तटीय क्षेत्रों में रहने वाले बहुत से लोगों के भोजन का महत्वपूर्ण घटक है। भारत के तटीय प्रदेशों में रहने वाले लोगों का प्राचीन काल से मछली पकड़ना एक प्रमुख व्यवसाय रहा है। हालांकि वाणिज्यिक स्तर पर मत्स्यन का विकास हाल के वर्षों में ही हुआ है तथा आज यह एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। लम्बी तटरेखा के होने के साथ भारत बड़े पैमाने पर मछली पकड़ने के कार्य का विकास करने की स्थिति में है। भारतीय जलीय भागों की मछली पकड़ने की कुल सम्भावित क्षमता एक करोड़ टन प्रति वर्ष है। 1995-96 में देश में लगभग 50 लाख टन मछलियाँ पकड़ी गयीं।

मत्स्यन को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है - अंत: स्थलीय मत्स्यन तथा समुद्री मत्स्यन। अंत: स्थलीय मत्स्यन से तात्पर्य अंत:स्थलीय जल खण्डों जैसे नदियों, झीलों, तालाबों तथा छोटे तालाबों आदि में मछली पकड़ने की क्रिया से है। जबकि समुद्री मत्स्यन से तात्पर्य समुद्री जल में मछली पकड़ने की क्रिया से है। 1995-96 में पकड़ी गयी कुल 50 लाख टन मछलियों में अंत: स्थलीय मत्स्यन का हिस्सा 20 लाख टन से अधिक था तथा शेष भाग समुद्री मत्स्यन से प्राप्त हुआ। समुद्री जल से पकड़ी गयी मछलियों की 70 प्रतिशत मछलियाँ केरल, गोआ, कर्नाटक तथा महाराष्ट्र के तट अर्थात् भारत में पश्चिमी तट से पकड़ी गई। शेष लगभग 30 प्रतिशत मछलियां पूर्वी तट के तमिललाडु, पं. बंगाल, आन्ध्र प्रदेश तथा उड़ीसा राज्यों से पकड़ी गई।

यद्यपि भारत की सम्भावित मछली पकड़ने की क्षमता बहुत अधिक है, लेकिन यहाँ अधिक मात्रा में मछली पकड़ी नहीं जातीं। इस स्थिति के लिये उत्तरदायी प्रमुख कारकों में मत्स्यन की परम्परागत विधियाँ, छोटी-छोटी मत्स्यन नौकायें तथा मछुआरों की गरीबी शामिल है। मत्स्य ग्रहण में वृद्धि करने के लिये सरकार ने अनेक कदम उठाये हैं जैसे मछुआरों को अधिक सक्षम नौकाओं को खरीदने के लिये वित्तीय सहायता, बड़े जहाजों को मत्स्यन में लगाना, मछुआरों की दुर्घटना अच्छे पोताश्रय तथा ठहरने की सुविधायें आदि। इससे देश में मत्स्य ग्रहण में वृद्धि हो रही है। अनेक सरकारी संगठन अंत:स्थलीय भागों में मत्स्यन के विकास में कार्यरत है। खारे पानी वाले छोटे तालाबों में प्रान मछलियों को पालना तमिलनाडु तथा आन्ध्र प्रदेश के तटीय प्रदेश में बहुत से लोगों का एक लोकप्रिय व्यवासय हो गया है। मीठे जल के अंत:स्थलीय मत्स्यन के विकास को भी प्रोत्साहित किया जा रहा है।

* नदियों व तालाबों आदि में मछली पकड़ने को अंत:स्थलीय मत्स्यन कहते हैं।
* महासागर तथा समुद्रों में मछली पकड़ने के कार्य को सागरीय मत्स्यन कहा जाता है।

पाठगत प्रश्न 22.6

1. भारत में सबसे अधिक पशुओं की संख्या वाले राज्य का नाम बताओ।

   _____

2. भारत के किस राज्य का दुग्ध उत्पादन सर्वाधिक है?

   _____

3. भारत में किस राज्य में मुर्गियों की संख्या सर्वधिक है?

   _____

4. 'आपरेशन फ्लड' किससे संबंधित है?

   _____

5. श्वेत क्रांति से क्या तात्पर्य है?

   _____

6. आयातित गायों की दो नस्लों के नाम बताओ।

   (i) _____ (ii) _____

7. मत्स्यन के दो प्रकार बताओ।

   (i) _____ (ii) _____

आपने क्या सीखा

- कृषि भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ है; क्योंकि यह कुल श्रामिकों के 65 प्रतिशत को रोजगार देती है। यह उसके प्रमुख उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराती है। इसका सकल घरेलु उत्पाद में 29 प्रतिशत तथा निर्यात आय में 30 प्रतिशत हिस्सा है। इसके लगभग आधे भाग पर खेती होती है और अधिक भूभाग को कृषि के अन्तर्गत लाने की कोई सम्भावना नहीं है। अत: निरंतर बढ़ती जनसंख्या को खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराना, केवल प्रति हैक्टेयर उत्पादन बढ़ाने से ही संभव है।

- प्रति व्यक्ति भूमि की कम उपलब्धता, प्रति हैक्टेयर उत्पादन कम तथा जीवन निर्वाह कृषि भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषतायें हैं। हालांकि भौगोलिक जलवायुविक तथा मृदा दशाओं की विविधता के कारण फसलों की विविधता निश्चित हुई है।

देश के विभिन्न भागों में अनेक प्रकार की कृषि पद्धतियाँ देखी जा सकती हैं। उदाहरण के लिये स्थानान्तरी कृषि से रोपण कृषि, आर्द्र कृषि से शुष्क कृषि, जीवन निर्वाह कृषि से वाणिज्यिक कृषि और इसी प्रकार की अन्य कृषि शामिल हैं।

- गत पचास वर्षों में भारत के कृषि उत्पादन में चार गुणी वृद्धि हुयी है। यह सब अनेक उपायों जैसे उन्नत बीजों का उपयोग, सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि, गहन कृषि तथा रासायनिक खादों के अधिक उपयोग से सम्भव हुआ है। तीन स्तरीय तकनीक के प्रयोग से सत्तर के दशक से भारत में हरित क्रांति लाने में सफलता मिली है।
- पशु सम्पदा की कुल कृषि उत्पादन में चौथाई हिस्से की भागीदारी है। भारत में जोती गयी प्रति हैक्टेयर भूमि पर पशु संख्या का घनत्व संसार में सर्वाधिक है। हमारे पशु निम्न स्तर के हैं। हालांकि, उनकी नस्लों की सुधार के अनेक उपाय किये जा रहे हैं। इसके फलस्वरूप श्वेत क्रांति संभव हुयी है तथा भारत संसार का दूसरा सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश बन गया है। भारत में अंत:स्थलीय तथा समुद्री मत्स्यन के वाणिज्यिक स्तर पर विकास की अच्छी संभावनायें हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. भारतीय कृषि के पिछड़ेपन के चार प्रमुख कारण बताइये। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इन समस्याओं के समाधान के लिये कौन से कदम उठाये गये हैं?
2. हरित क्रांति से क्या तात्पर्य है? कौन से कारक इसके लिये उत्तरदायी हैं? हरित क्रांति ने देश की खाद्य समस्या को सुलझाने में निभाई भूमिका के बारे में विस्तार से बताइये।
3. हरित क्रांति के कार्यक्रम को सम्पूर्ण देश में लागू क्यों नहीं किया जा सका? बताइये।
4. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये–

   (क) कृषि की गहनता

   (ख) शस्यावर्तन

   (ग) मिश्रित शस्यन

   (घ) श्वेत क्रांति
5. भारत के रेखा मानचित्र में गेहूँ व चाय उत्पादक क्षेत्रों को दर्शाइये।

अपने उत्तरों को जाँचिए

पाठगत प्रश्न

22.1 1.

कृषि के प्रकार	मुख्य विशेषतायें	प्रमुख क्षेत्र
(i) निर्वाह कृषि	अधिकांश उपज का स्थानीय उपभोग	पश्चिम बंगाल में चावल की कृषि
(ii) रोपड़ कृषि	उद्योग स्तर का प्रबंध	असम में चाय की कृषि
(iii) आर्द्र कृषि	उच्च वर्षा के क्षेत्रों में किया जाता है।	मालाबार तट
(iv) वाणिज्यिक कृषि	बाजार के लिये बड़ी मात्रा में उत्पादन	तराई प्रदेश
(v) शुष्क कृषि	कम वर्षा के प्रदेशों में की जाती है।	राजस्थान और गुजरात

2. (क) आर्द्र कृषि (ख) वाणिज्यिक कृषि (ग) गहन कृषि

22.2 1. (क) मिट्टी की उर्वरता बनाये रखने के लिये कई फसलों को एक के बाद दूसरी के क्रम में बोने को शस्यावर्तन कहते हैं।

(ख) फसलों की गहनता से तात्पर्य एक वर्ष में किसी भूभाग पर उगाई गई फसलों की संख्या से है।

(ग) अधिक उत्पादन देने वाले बीजों की किस्मों के रासायनिक खादों तथा सिंचाई के नयी तकनीक के पैकेज के उपयोग से हुये तीव्र कृषि उत्पादन को हरित क्रांति कहते हैं।

2. सिंचाई के साधन

3. अधिक उत्पादन देने वाले बीजों, रासायनिक खादों के उपयोग तथा सिंचाई सुविधाओं के विस्तार, कीटनाशी तथा फफूँदीनाशी दवायें (इनमें से कोई दो)

4. (क) पंजाब (ख) हरियाणा

22.3 1. (क) (i) चावल (ii) गेहूँ

(ख) (i) असम या पश्चिम बंगाल तथा तमिलनाडु

(ग) दूसरा

(घ) 10 प्रतिशत

(ङ) उत्तर प्रदेश

2. ऊँचे तापमान, भारी वर्षा तथा सुप्रवाहित उपजाऊ जलोढ़ मिट्टियाँ (इनमें से कोई दो)

22.4 1. (क) 26 प्रतिशत (ख) 25 प्रतिशत (ग) 21 प्रतिशत

22.5 1. उत्तर प्रदेश

2. उत्तर प्रदेश

3. आन्ध्र प्रदेश

4. आपरेशन फ्लड, बड़े शहरों में दूध की उपलब्धता में हुये सुधार से संबंधित है।

5. श्वेत क्रांति से तात्पर्य दूध के उत्पादन में हुयी तीव्र वृद्धि से है।

6. जर्सी, होल्स्टीन, फ्रेजियन (इनमें से कोई दो)

पाठान्त प्रश्न

1. अनुच्छेद 22.4 देखिये – छोटी जोतों, परम्परागत कृषि विधियों, प्रकृति पर अधिक निर्भरता, घटिया बीजों आदि बिन्दुओं पर जोर दीजिये जो कृषि की निम्न उत्पादकता के लिये उत्तरदायी हैं।

2. अनुच्छेद 22.10 को देखिये।

3. अनुच्छेद 22.10 देखिये – हरित क्रांति की तकनीक के सफलता पूर्वक उपयोग के लिये आवश्यक विकसित सहायक तंत्र तथा उसके देश में कुछ ही प्रदेशों के उपलब्धता को प्रमुखता दीजिये।

4. अनुच्छेद 22.5, 22.8 तथा 22.15 देखिये।

5. भारत में विभिन्न फसलों को दिखाने वाले मानचित्रों की मददे से गेहूँ व चाय के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों को दर्शाइये।